जय बंगला
जय भारत

राम कुमार अबरोल

जय बंगला
जय भारत

राम कुमार अबरोल

प्रकाशक :
योगेन्द्र पब्लिशर्ज़
पंजतीर्थी
जम्मू

मुद्रक :
स्पेसएज प्रिंटर्ज़
जम्मू

प्रथम संस्करण

मूल्य : छः रुपये

मुख पृष्ठ :
दर्शन गंदोत्रा
जम्मू

दो शब्द

मैं आप का परिचय जम्मू व कश्मीर के एक ऐसे नवयुवक से करवा रहा हूँ, जो अपने अनूठे स्वभाव के लिए जाने पहचाने हैं।

यह प्रसिद्ध उपन्यासकार और कहानी-कार भी हैं। दर्जनों पुस्तकें लिख कर इन्हों ने साहित्य के क्षेत्र में अपना स्थान तो बना लिया है, लेकिन प्रसन्नता की बात यह है कि जहां देश की बन्दूक विश्वशांति की रक्षक है, वहां श्री राम कुमार अबरोल की लेखनी भी बन्दूक की

पूरी साथी है, जिसका एक उदाहरण इन की यह नई कृति है। इस में अत्याचार करने और सहने की पराकाष्ठा को अनोखे ढंग से पेश किया गया है।

बंगला देश में क्या हुआ, किस ने क्या किया और बंग-बन्धु शेख मुजीबुर्रहमान की धरती ने क्या देखा। इस सोनार धरती को श्रीमती इंदिरा गांधी की क्या देन है, इस गाथा को लेखक ने अपने स्वरों में गाया है। जिस की झलक आप को "जय बंगला जय भारत" में मिलेगी। मुझे पूरी आशा है कि श्री अबरोल का यह प्रयत्न सफल रहेगा और भारत के लोक तंत्र, समाजवाद और धर्मनिर्पेक्षता के उच्च आदर्शों के गौरवमय दुर्ग के अमिट चिन्हों में एक चिन्ह और जा मिलेगा।

—त्रिलोचन दत्त

समर्पण

मेरे जीवन के कुछ गौरव मय सांस प्रस्तुत हैं। धरती का कोई भी टुकड़ा हो उसे भारत और भारतीय की अपने आदर्शों के रूप में देन सदा अमर है।

मुझे गौरव है कि मैं अन्तर्राष्ट्रीय पथ प्रदर्शिका भारतरत्न श्रीमती इन्दिरा गान्धी को यह पुस्तक समर्पित कर रहा हूँ।

—राम कुमार अबरोल

कहानियां

जय बंगला जय भारत

कुछ तथ्य : : कुछ अनुभूतियां

बंगला देश की घटनाओं, वहां के स्वतन्त्रता-संघर्ष और पाकिस्तान द्वारा अत्याचारों ने प्रत्येक लेखक और बुद्धिजीवी का मन-मस्तिष्क झकझोड़ कर रख दिया।

हृदय की वेदना और उदगार लेखनी द्वारा प्रवाहित हो उठे।

—अबरोल

लट्टू

आकाश की उड़ानों में हम कहानियों के पंछी पकड़ते हैं। समुद्र में छिपी, कहानियों की सीपियां चुनते हैं। बीते हुए समय के अन्धेरों में भटकते हैं। आने वाला युग हमारी तीखी सोचों का केन्द्र बन जाता है। मगर इर्द-गिर्द बिखरे हुए अनगिनत गीतों के बोल हमारे होंठों पर नहीं थिरकते। हम अपने मन में नहीं झांकते, जिस की अथाह गहराइयों में सैंकड़ों कहानियां रहती हैं। धरती पर अपने साये तले हमें कुछ दिखाई नहीं देता। साये से बाहिर हम बेशक किताबों पर किताबें लिख बैठें। वैसे ही, जैसे दीपक तले अन्धेरा......खैर जाने दीजिए, मेरे विचार

शायद भटक गए हैं। लेकिन नहीं, लेखक का मन होता ही कोमल है। उस पर कोई भी घटना निशान छोड़ जाती है। दिल पर जाते जाते ऐसी लकीर छोड़ जाये, जो अमिट हो। लेखक अपनी छाया तले बिखरे हुए करुणा के तिनकों पर जब कला का महल निर्मित करता है तो उस में रहने वालों को जैसे अपनी वेदना की अनुभूति होती है, वैसे ही दूर से देखने वालों को।

अभी कल ही की बात है, रफ़ीक को ज़ुल्म से वास्ता था। उसके दिल में दर्द उठता था जब घर पर बूढ़ा बाप पेट पर हाथ फेरते हुए, मन में आशा की मद्धम सी लौ जगाए उस की प्रतीक्षा करता था। ममता का रूप मां, जिस ने अपने रास्ते के कांटे न कभी चुने और न ही चुनने थे। अपने लहू को एक शरीर दे कर कलेजे पर भारी पत्थर रख लिया था। पत्थर ही तो रखा था, बंजर धरती पर यदि कोई फूल खिल जाये तो गर्म हवाओं की तपश से वह मुर्झा जाता है और धरती की छाती फटने लगती है। बहन और पत्नी दोनों, चीथड़ों से झांकती हुई जवानी को शर्म की पोशाक से ढांपती हुई रफ़ीक के कदमों की आहट पर कान लगाए रहती थीं। कहाँ रोटी के लिए सुलगी हुई आग और कहाँ परमाणु परीक्षण! यों समझिए जैसे रफ़ीक परमाणु नगर का निवासी

था, जहां पेट पर फ़ाकों की पट्टी बांधना भी एक अनुभव था। एक ऐसा अनुभव, जिस की आग में बंजर धरती पर ईश्वर के बिखेरे हुए छोटे छोटे परमाणुओं का ईंधन जल रहा था। ये परमाणु यदि सैनिक शासकों को नज़र नहीं आते थे तो गिला किया भी किस से जाता ? उस ईश्वर से, जो कलाकार की हत्या होने पर, अबला का सतीत्व लुटने पर भी मौन रहा। जैसे परमाणु बिखेरना ही उस का काम था, उनकी देख भाल नहीं।

रफ़ीक भी एक परमाणु था। एक लेखक, जो दिल के घावों पर फाहा भी न रख सकता था। ढाका से पांच कोस दूर एक गांव में प्रतीक्षा में उठी हुई नज़रों की ओर देख रहा था। सोचना उसने बंद कर दिया। उस समय वह एक सैनिक यूनिट के अफ़सरों की ड्यूटी दे रहा था। अफ़सर सरकारी काम नहीं कर रहे थे। वे ताश खेल रहे थे। चार घण्टे हो गए थे रफ़ीक को उनके लिए बर्फ का पानी, सिगरेट और शराब तथा कबाब ला-ला कर मेज़ पर सजाते। कबाब उस के घर में भी बन रहे थे, परन्तु खाने के लिए नहीं, खाने वालों के। रफ़ीक के हृदय में हूक उठी। चार घण्टों के खेल के दौरान सौ रुपये अफ़सरों ने केवल खाने-पीने की चीज़ों पर ही खर्च कर दिये थे। सौ रुपये से क्या क्या

हो सकता था, वह सोच रहा था। अब्बा की आंखों का ईलाज हो सकता था, जिन की रोशनी धीरे धीरे कम हो रही थी। मां के लिए चप्पल ख़रीदी जा सकती थी, जिस के पांव के छालों से रफ़ीक का लहू रिसता था। बहन के लिए एक पोशाक आ सकती थी। पत्नी का आपरेशन हो सकता था, जिस के कलेजे का पत्थर चलते चलते पेट पर छाने लगा था। शायद इसी लिए उसने कभी रोटी के लिए शिकायत नहीं की थी। यहां पहुंच कर रफ़ीक की विचार धारा रुक गई। पत्नी का आपरेशन ज़रूरी था; परन्तु न्याज़ को नई वर्दी न सिला दी तो उसका नाम स्कूल के बोर्डिंग से कट जाएगा और यदि नाम कट गया तो उस की पढ़ाई अधूरी रह जाएगी। वह भी उस की तरह एक क्लर्क बन जाएगा और दिन भर के परिश्रम के बाद सैनिक अफ़सरों के लिए शराब और कबाब ढोएगा।

न्याज़ की वर्दी के लिए रफ़ीक ने आज ही किसी से पच्चीस रुपये उधार लिए थे। अंदर से आवाज़ आई और सौ रुपये का उस का विभाजन अधूरा रह गया।

थोड़ी देर बाद कुछ चीज़ें ले कर रफ़ीक जब बाज़ार से लौटा तो सहसा सीढ़ी पर रुक गया। वहां से कुछ नोट उसने उठाए। पांच पांच के चार नोट—

बीस रुपये ! रफ़ीक ने मेज़ पर सामान रखा। रुपयों के बारे में किसी ने कुछ न कहा। वह कमरे से बाहिर निकल आया और एक ओर दीवार का सहारा ले कर स्टूल पर बैठ कर हिसाब लगाने लगा। अन्तर केवल इतना था कि अब की बार सौ रुपये की बजाय बीस रुपये का विभाजन था। इसी विभाजन में जाने कब उसकी आंख लग गई। आंख खुली तो अफ़सर ताश खेल कर वापिस जा रहे थे। रफ़ीक कमरे के अंदर गया। मेज़ पर ताश के पत्ते बिखरे पड़े थे। उस की नज़र दो पत्तों पर रुक गई। ईंट का बादशाह और हुकुम का ग़ुलाम। वह मुस्कुरा दिया। आदमी से लेकर ताश के पत्ते तक एक सी व्यवस्था है, उस ने सोचा। ताश और गिलास समेट कर वह कमरे से बाहिर निकल आया। बाहिर उसने भंगी को कुछ ढूंढते हुए देखा। पूछने पर भंगी ने भर्राई हुइ आवाज़ में बताया कि उसका महीने भर का वेतन गुम हो गया है। रफ़ीक भावुक व्यक्ति था और उसपर कहानी-कार उस ने धन्यवाद किया कि भंगी के रुपये उसे ही मिले थे। रफ़ीक ने जेब में हाथ डाला। कई क्षण बीत गए, मगर जेब से हाथ बाहिर नहीं निकला। माथे पर पसीना आ गया। पसीने में उसकी कहानी का क्लाइमिक्स चमक रहा था। बीस रुपये उसकी जेब से किसी हारे हुए जुआरी ने निकाल लिए थे।

"क्या ढूंढ रहे हैं आप ?" भंगी ने पूछा।

"तुम्हारे रु........." रफ़ीक ने बात अधूरी छोड़ दी। उसने दूसरी जेब से भाई की वर्दी वाले रुपये निकाल कर भंगी को दे दिए। जाने वह कब तक भंगी की पीठ की ओर देखता रहा जो उसे दुआएं देता हुआ जा रहा था। वह सम्भला और धीरे धीरे उसने कदम बढ़ा दिए। 'क्या मैं सदा निर्धन ही रहूँगा', वह सोच रहा था। सहसा उसे ख़याल आया, दो दिन बाद उस की परीक्षा का परिणाम निकलने वाला है। पल भर के लिए उसे महसूस हुआ कि उस की तमाम मुसीबतें ख़त्म हो गई हैं। उसने बी० ए० की परीक्षा पास कर ली है और वह क्लर्क नहीं रहा, अफ़सर बन गया है। दूसरे ही क्षण वह अपनी मूर्खता पर मुस्कुरा दिया। न ही उस का परिणाम निकला था और न तो वह अफ़सर बना था। हां, उस की कहानी अवश्य पूरी हो गई थी।

रफ़ीक का एक दोस्त था समद। रात को वह उस के हां ठहर गया। देर हो जाने पर रफ़ीक समद के घर ठहर जाता था और फिर आज तो उसने एक कहानी का प्लाट भी सोच रखा था। रफ़ीक कहानी सुनाने लगा तो समद बोला, "मैं इस समय कहानी नहीं सुनूंगा, पास बच्चे खुर्राटे भर रहे हैं और फिर

तुम बोलते भी धीमी आवाज़ में हो, सुबह सुनूंगा।"
"ओ, भई तुम आंखें मूंध लो, समझ लो कि रेडियो पर कहानी सुन रहे हो, जिस की आवाज़ धीमी की हुई है।" रफ़ीक ने उत्तर दिया और कहानी सुनाने लगा।

शुक्रवार को परिणाम निकला तो समद प्रिंसिपल के कमरे में से यों भागा, जैसे उस का अपना परिणाम निकला था। उसका मुंह लाल हो गया था। फूले हुए सांस से वह एक जगह रुक कर हाथ में पकड़ी हुई गज़ट खोल कर देखने लगा। उसकी नज़र रफ़ीक के रोल नम्बर पर पड़ी। उस का दिल धड़कने लगा। रफ़ीक पास हो गया था। उसने साढ़े चार सौ में से तीन सौ साठ नम्बर लिए थे। समद के चेहरे की लाली में से खुशी झांकने लगी। रफ़ीक के अब्बा की दवा, मां और बहन के लिए कपड़े, पत्नी के लिए आपरेशन का खर्चा समद की आंखों के सामने पड़ा था, कागज़ के पुर्ज़े पर नम्बरों के रूप में। रफ़ीक ने किस हालत में नौकरी करके घर के खर्चे का बोझ ढोते हुए, दिए की रोशनी में पढ़ाई का काम पूरा किया था। महफ़िलों में कहानियां पढ़ कर साहित्य-जगत् में एक स्थान बना लिया था। रेडियो के प्रोग्रामों में भाग ले कर उसने थोड़ी बहुत चांदी भी कमाई थी, लेकिन इतनी नहीं कि घर में प्रतिदिन सब्ज़ी बन

पाती। फिर भी उसने यह सब कुछ किया था। केवल इस आशा के सहारे कि बी० ए० करके घुप अन्धेरे में मद्धम सी रोशनी जला सकेगा। बादलों में घिरे उस के आकाश में शायद कोई तारा जगमगा उठे। समद इन ही विचारों में खोया हुआ रफ़ीक के गाँव पहुँचा। बस स्टैंड से रफ़ीक के घर का फ़ासला तय करना उसके लिए मुश्किल हो रहा था। तेज़ तेज़ कदम उठाते हुए आख़िर वह रफ़ीक के घर पहुंचा। मगर आंगन में नज़र पड़ते ही उस के पांव जम गए। उसे चक्कर आ गया। उस ने दीवार का सहारा ले लिया। आंगन में रफ़ीक का शव पड़ा था। रफ़ीक के दिल के पास गोलियों के निशान थे, जिन में से अब तक लहू रिस रहा था। लड़खड़ाते हुए समद रफ़ीक के अब्बा के पास पहुँचा, "रफ़ीक को क्या हुआ अब्बाजान ?" उसने पूछा। रफ़ीक के अब्बा ने नज़र उठा कर समद की ओर देखा। बूढ़े की आंखों की अथाह गहराइयों में एक चमक थी। बहुत देर तक वह समद की ओर देखता रहा।

आख़िर उस के होठों में थिरकन हुई, "बहिन की इज़्ज़त बचाने के लिए भाई ने जान दे दी।"

"ज़रीना की इज़्ज़त...किसने ?" समद का प्रश्न

अधूरा रह गया। बूढ़ा मुस्कुराया और बोला, "और किसने! रावलपिण्डी के फौजी ने... इन्तकाम का वक्त आ गया है, बेटा।"



धरती का रंग लाल हो गया

सात अप्रैल १६७१
एक ऐतिहासिक दिन

अशफाक एक बंगाली युवक, ज़ुल्म की भट्टी में जल कर कुन्दन बन कुका था। अशफाक, जो अब गोली की नोक पर, चिटागांग की क्लब में, नशे में बदमस्त फौजी अफ़सरों के लिए बर्फ का पानी, सिग्रेट, शराब और कबाब मेज़ों पर सजा रहा था, एक मेज़ के पास रुक गया। सिग्रेट के सुलगते गुल से मेज़-पोश को आग लग गई थी। मेज़-पोश जल रहा था। आग की छोटी छोटी लपटों में उसे अपने जलते हुए गांव की झलक नज़र आई, जहां मलबे के अम्बार

पर टक रींग रहे थे। अनगिनत बूढ़े और मासूम बच्चे बख्तरबन्द गाड़ियों तले दब चुके थे। चीख़ती माय मशीनगनों की गोलियों से छलनी हुई थीं, अबलाओं का सतीत्व लूट कर राम-रहीम की आंखों में आंसू भर दिये गए थे। उसने मेज़-पोश पर हाथ मारा। आग बुझ गई, हाथ जल गया। मेज़ पर से कुछ गिलास नीचे गिर पड़े। शीशा टूटने की आवाज़ कहकहों में डूब कर रह गई।

"यह जंग कब ख़त्म होगी ?" मेजर ने कर्नल से पूछा।

"जंग नहीं, ख़ूनी तमाशा कहो। यह तमाशा बहुत जल्दी ख़त्म होगा और जब ख़त्म होगा तो फिर किसी बंगाली को इस क्लब में आने की इजाज़त नहीं होगी। यहां का कोई भी बंगाली कार में सवार नहीं हो सकेगा हा-हा-हा।" कर्नल का कहकहा जहाज़ की आवाज़ में डूब गया। अशफाक की नज़रें भी आसमान की ओर उठ गईं। एक फाईटर धुआं-धार लकीर पीछे छोड़ता हुआ उड़ रहा था। किसी जगह बम गिराने, सरसब्ज़ खेतों का सुहाग लूटने, मैदानों में खेलते मासूम बच्चों को खिलने से पहले ही कुचल देने के लिए। लेकिन बच्चे वहां होंगे कहां, जो गोलियों की लपेट से बच कर बमों की नज़र हो सकेंगे।

"व्हिसकी...सुनते नहीं, बहरे हो ?"

अशफाक कर्नल की डांट पर चौंक पड़ा और गिलास में व्हिसकी उंढेलने लगा।

"आज पोलिस लाईन्ज़ पर जम कर लड़ाई हुई। लड़ाई ख़त्म होने के बाद बंगालयों की लाशें कुत्तों के आगे फैंक दी गईं। यहां के कुत्ते भी महीना भर से भूखे हैं।" कर्नल ने कहा। अशफाक के हाथ कांप गये। वह सम्भला, नफ़रत की लहर उसके जिस्म में लहरा गई। उसे मां, बहन, पिता, बच्चों की चीखें सुनाई नहीं दे रही थीं। फौजी अफ़सरों के कहकहों में कुछ सुनाई नहीं दे रहा था। उसे सुनाई दे रही थी केवल बमों की गड़गड़ाहट। उसे भूख से बिलखते हुए नीम मुर्दा शरीर नज़र नहीं आ रहे थे। उसे नज़र आ रही थी तोपों के दहानों से निकलती हुई आग। उसके मन में ज़ुल्म के ख़िलाफ नफ़रत थी। चार घण्टे हुए थे उसे फौजी अफ़सरों की ज़हर में बुझी हुई बातें सुनते। हसरतों का धुआं छाती में छिपाए वह जाम पर जाम दे रहा था। एक नज़र उसकी शराब की बोतल पर थी और दूसरी अफ़सरों के होल्सटरों में लटकते हुए पिस्तौलों पर। क्लब में जगह-जगह पाकिस्तानी करंसी के नोट और गहने बिखरे पड़े थे। अशफाक की धरती की पूंजी वर्षों से लुट रही थी। उसकी धरती ने सदा सोना उगला और उस धरती के निवासियों ने सदा लहू। सोने से शासकों

की तृष्णा को पूरा किया। शासकों ने रंग रलियां मनाईं। उनके बच्चे महलों में पले। उनकी पत्नियों ने सुवर्ण आभूषण पहने। उन्होंने जंगी सामान खरीदा और अपने शान्ति-प्रिय पड़ोसी को बार-बार चिनौतियां दीं। आज उन्हीं शासकों ने उसकी धरती की कोख को ही जला डालने का यह राक्षसी नाटक रचा है। नाटक के इन कलाकारों ने चान्दी की झनकारों से मनुष्य को पशु बना डाला और पशु ने बंगला धरती का एक-एक घर ध्वस्त कर डाला। अशफाक सोच रहा था।

"व्हिस्की......कमबख्त, तुम्हारा ख़याल किस तरफ है ?"

"जी !"

"जी का बच्चा ! व्हिस्की लाओ, वर्ना शूट कर दूंगा।"

अशफाक ने जल्दी से जाम भरना शुरू कर दिया, लेकिन उस की सोच का सिलसिला कायम था। उसका शरीर थकावट से चूर हो रहा था, परन्तु धरती-मां का शरीर तो वर्षों से चूर हो रहा था फौजियों के अत्याचारों से, जिन का धर्म था सत्ता और सत्ता प्राप्त करने के लिये जनता की अछूती उमंगों का गला घोंटना, उन से जीने का अधिकार छीनना, मुट्ठी-भर लोगों का विश्वास बन चुका था।

"आओ, बंगला देश की हसीना ! तुम्हारा ही इंतज़ार था। कहां से लाए हो इस छोकरी को ?"

"साहब, कोमिल्ला के करीब एक ग़ार में बहुत सी लड़कियां छुपी हुई थीं। यह उन में सब से हसीन है।"

जवान ने उत्तर में कहा और लड़की को झटका दिया, जो अपने आप को छुड़ाने का यत्न कर रही थी।

"आराम से जवान! फूल से, आदमी की तरह पेश आओ।" कर्नल ने कहा और लड़की की ओर बढ़ा। लड़की के मुंह से चीख़ निकल गई। अशफाक की सोच का सिलसिला टूट गया। उसके पांव तले से ज़मीन निकल गई। वह सम्भला। उसने लड़की के मुरझाए हुए चेहरे की तरफ देखा। दोनों की आंखों में समुद्र तड़पे। अशफाक के समुद्र में मंथन हुआ, अमृत चेहरे से बहता हुआ धरती में समा गया और ज़हर उसके अंग अंग में भर गया। बिजली की तरह लपक कर उस ने कर्नल के होलसटर से पिस्तौल निकाल कर पागलों की तरह फायरिंग शुरू कर दी। गोलियों की आवाज़ क्लब के कोने-कोने में गूंज उठी। सिवाए एक गोली के, जो लड़की का सीना चीरती हुई अशफाक के दिल में उतर गई थी। लड़की अशफाक की ढाल बन गई थी। एक लरज़ा सा तारी हो गया।

हैरान फौजियों ने एक नज़र अफ़सरों की लाशों पर और दूसरी तड़पते हुए अशफाक और लड़की पर डाली। मेजर ने पिस्तौल साफ करते हुए अशफाक को ज़ोर से ठोकर लगाई। अशफाक मुस्कुराया। उसने लड़की के सिर पर हाथ रखने का असफल यत्न किया।

"जॉय बॉङ्गला"...उस के मुंह से निकला। "जॉय बॉङ्गला" लड़की ने जवाब दिया। दोनों के होंठ ख़ून उगलने लगे। ख़ून बहता रहा और धरती का रंग लाल हो गया।

●

मुक्ति बाहिनी

रज़िया ने दूर दूर तक फैले हुए समुद्र की ओर देखा। पानी के बहाव में धड़कन जाग उठी। समुद्र का पानी अब अनगिनत लाशों के बोझ तले दबा हुआ नहीं था। धरती के इस टुकड़े को मुक्ति बाहिनी की सहायता से एक नया जीवन मिला था। रज़िया ने घुटनों से ऊपर साड़ी सरका कर अपने गोरे पांव पानी में डाल दिये। पानी में कम्पन सा आ गया। इस कम्पन में एक मस्ती थी। मुंह पर झुके हुए लम्बे बालों को उसने झटक दिया और पानी में जाल फैंका। कहीं कहीं झाग में झलकती लाली पर उसकी नज़र पड़ी। पानी की धारा में रक्त का रंग अभी तक

बना हुआ था। उसका हृदय सुलगने लगा। मां, बहन, भाई के मृत शरीर उसकी नज़रों के सामने घूम गए। समय ने उसे सहनशील बना दिया था। वह सम्भली, जाल खींचा, मछलियों से भरी टोकरी सिर पर उठाई और झोंपड़ी की ओर चल पड़ी। सहसा उसकी नज़र एक आदमी पर पड़ी। उसे लगा, जैसे टिकटिकी लगा कर वह उसे ही देख रहा था। रज़िया का मुंह लाल हो गया। लाली में रोष की झलक स्पष्ट थी। तेज़ कदम उठा कर वह आदमी के पास पहुँची और मछलियों वाली टोकरी उसके सिर पर दे मारी। परन्तु टोकरी फैंकते-फैंकते उसे मालूम हो गया था कि वह तो गहरी नींद में सो रहा है। अजनबी तरुण चौंक कर उठ बैठा। उसके चेहरे पर सहज सरलता की छाप देख कर उसे तसल्ली हुई, अन्यथा, महीनों से ये अनजाने लोग उसे हिंसक पशुओं के समान दिखाई दिए थे।

"कौन हो तुम ?"

"तुम बस्ती में किस तरह जा रहे हो ?" रज़िया ने युवक का प्रश्न अनसुना करके पूछा।

"चल कर।" युवक ने उत्तर दिया।

"लेकिन क्यों ?"

"क्यों ? क्या बस्ती में जाने की मनाही है ?"

युवक के मुरझाए हुए चेहरे पर मुस्कान थी।

रज़िया ने नज़रें झुका लीं। यह पहला मौका था जब रज़िया के मन में धड़कन हुई थी। परन्तु यह उमंगों का नहीं इज़्ज़त की रक्षा का समय था। वह नज़रें नीची किये हुए चल पड़ी। युवक ने भी अपनी बन्दूक उठाई और रज़िया के पीछे २ बस्ती की ओर चल पड़ा। दोनों अपनी अपनी सोच में डूबे हुए चल रहे थे। बस्ती के पास पहुँच कर दोनों रुक गए। उन्हें मछेरों की भीड़ दिखाई दी जिसके बीच में एक बूढ़े पर एक फौजी कोड़े बरसा रहा था। रज़िया के मुंह से सहसा एक चीख़ निकली, और वह भीड़ की ओर भागी। युवक भी आगे बढ़ा। पास जाने पर उसने देखा कि रज़िया फौजियों के चंगुल से निकलने का यत्न कर रही थी। वह मछली की तरह तड़पी और अपने आप को छुड़ा कर बूढ़े के ऊपर लेट गई। कोड़ा मारने वाला क्षण भर के लिए रुका। वह मुस्कुराया, उसका हाथ उठा और फिर रज़िया के फूल जैसे शरीर पर नील पड़ने लगे। अजनबी का अंग-अंग गुस्से से कांपने लगा। इतना अत्याचार उस ने अपने गांव में भी नहीं देखा था जहां से भाग कर उसने अपनी जान बचाई थी। उसका बन्दूक वाला हाथ ऊपर उठा, परन्तु उसी समय दूसरी ओर से कुछ और फौजी आ गये, जो पहले वाले फौजियों से भिन्न लगते थे। उन को देख कर कोड़ा मारने

वाले का हाथ रुक गया। फौजियों की दोनों टोलियां एक दूसरे के सामने आ गईं। पलक झपकते ही आने वाले फौजियों के एक अफ़सर का हाथ अपने होलस्टर की ओर बढ़ा और दूसरे ही क्षण कोड़ा मारने वाले की लाश धरती पर तड़प रही थी। कोड़ा मारने वाले के साथी भाग खड़े हुए। "गोली मत चलाओ। कायरों की पीठ पर गोली चलाना हमें शोभा नहीं देता।" पिस्तौल चलाने वाले अफ़सर ने साथियों को आदेश दिया। वह डर से सहमे हुए मछेरों की ओर देख कर मुस्कुराया और बोला—"घबराओ मत, हम बहुत जल्दी इस इलाके में भी इन पाकिस्तानी अत्याचारियों के अस्तित्व को समाप्त कर देंगे।" अफ़सर ने इतना कहा और अपने साथियों को ले कर वहां से चला गया।

बूढ़ा और रज़िया दोनों भूमि पर बेहोश पड़े थे। इसी तरह कुछ समय और बीत गया, परन्तु भीड़ में से किसी को भी साहस न हुआ कि वह आगे बढ़ कर दोनों को सम्भाले। जैसे उन्हें अब भी डर था कि पाकिस्तानी फिर न आ जाएं। अजनबी आगे बढ़ा, उसने बन्दूक नीचे रखी और बूढ़े और रज़िया को सहारा दिया। उसे देख कर बस्ती के लोग भी आगे बढ़े, दोनों को कंधे पर उठाया और एक झोंपड़ी की ओर चल पड़े। अजनबी को अनुभव हुआ जैसे वह

यहां अजनबी नहीं, इन बेगुनाह लोगों में से ही एक है। उसने सोचा यहां भी तो किसी को वह अजनबी नहीं लगा। भगवान् ने जैसे ज़ुल्म सहने वालों को ऐसी आंख दे दी थी कि वे अपनों को देखते ही पहचान लें।

रात का अन्धेरा गहरा हो रहा था। लोग अपनी अपनी झोपड़ियों में जा चुके थे। रज़िया को होश आ गई थी। परन्तु बूढ़ा अब भी बेहोश था। रज़िया के नैन सोच में डूबे हुए थे। उसने अभी तक अजनबी को जाने के लिये नहीं कहा था। वह वैसे ही बन्दूक का सहारा लिये बैठा हुआ बूढ़े के दुर्बल शरीर की ओर देख रहा था। सहसा बूढ़े ने आंखें खोलीं। अजनबी को देख कर वह सहम गया। युवक अपनी जगह से उठा, उसने बूढ़े का सिर अपनी गोद में रख लिया। धीरे-धीरे बूढ़े की आंख लग गई। युवक ने रज़िया की ओर देखा।

"तुम्हारा नाम क्या है ?" रज़िया ने पूछा।

"रहमान।"

"और मेरा रज़िया।" रज़िया ने स्वयं ही बता दिया। तुम बाबा के पास बैठो मैं खाना बनाती हूं।"

"नहीं, मैं अब चलता हूं।"

"कहां ?"

"कहां ?" रहमान के मुंह से निकला। वह मुस्कुराया और उसने आंखें झुका लीं।

"कहां ?" वह सोच रहा था। उसका अब न कोई घर था, न मां, न बहन, न छोटा भाई और न बाप। वे सब पाकिस्तानी अत्याचारियों के ज़ुल्म का शिकार हो चुके थे।

"क्या सोच रहे हो ?" रज़िया के बोलों में मिठास घुलती जा रही थी।

"कुछ नहीं, यह बुज़ुर्ग कौन हैं ?"

"मेरे अब्बा।"

"लेकिन..." रहमान रुक गया। रज़िया के कांपते होठों को देख कर उसे आगे पूछने का साहस न हुआ।

"मेरे दिल में झांक कर देखो, शायद वहां के अनगिनत घावों को देख कर तुम्हें सहारा मिल सके। मैं भी तुम्हारी ही तरह मुसीबत का मारा हूँ। मेरे दिल में भी बदला लेने की आग भड़क रही है। घबराओ नहीं, वह समय दूर नहीं जब हमारी यह धरती पाकिस्तान के चंगुल से मुक्त हो कर रहे गी। हम जिन्दा रहे तो पवित्र हवा में सांस लेंगे।" अजनबी ने इतना कहा और चुप हो गया। रज़िया की आंखों में चमक आ गई।

कुछ ही दिनों में ऐसा लगने लगा, जैसे रहमान

इसी बस्ती का रहने वाला हो। रज़िया को रहमान के बारे में सब कुछ पता चल गया था। यह भी कि वह अपने देश पर आई विपत्ति का समाचार सुनकर पढ़ाई अधूरी छोड़ कर इंगलैण्ड से लौट आया था। किस तरह वह अपने गांव पहुँचा। वहां उस ने क्या देखा। कैसे खुद बच निकला और कैसे इस बस्ती में पहुँच गया। यह एक लम्बी कहानी थी, जिसका रज़िया को पता लग चुका था। दोनों एक दूसरे के बहुत करीब आ गये थे। बस्ती के लोग रहमान की सौगन्ध नहीं खाते थे। वह बस्ती के दुख-दर्द का पूरा भागीदार था। अत्याचार के अंधेरों में भटकने वाले इन मछेरों को विश्वास होने लगा था कि यह धरती उनकी अपनी है और इस पर राज्य भी उनका अपना होगा, किसी दूसरे का नहीं। तोपों की गड़गड़ाहट, टैंको का रींगना, गोलियों की आवाज़, जाहाज़ों की उड़ान, यह सब उनके लिये रोज़ की बात बन चुकी थी। मछेरों की यह बस्ती अब पहली सी नहीं रही थी, एक मोर्चा बन चुकी थी और जिसका नेता था रहमान। मछलियां पकड़ने वालों के हाथ अब बन्दूक के घोड़ों पर दौड़ते थे। पल भर में वह मछेरों से सिपाही बन गए थे। उन्हों ने पाकिस्तानी फौजों के लिये असला लाने वाले दो जहाज़ों को नष्ट कर दिया था। वह तो अब सिर्फ मरना या मारना जानते थे।

जीना चाहते थे लेकिन मान पूर्वक। हर शाम को अपनों की लाशें उठाना और मुस्कुराते हुए उन्हें दफन करना उनका पेशा बन गया था। वह शत्रुओं से बहादुर सिपाहियों की तरह लड़ रहे थे। उन्हें प्रतीक्षा थी तो मुक्ति-बाहिनी की, जो पल पल, मीलों में छाई हुई पाकिस्तानी फौजों का गला घोंटते हुए उनकी बस्ती के करीब पहुँच रही थी।

आज कितने दिनों बाद समुद्र में मछलियां पकड़ने के लिये रज़िया रहमान को साथ लाई थी। रहमान के पास इन बातों के लिये समय ही कहां था। उसने बहुत आग्रह किया परन्तु रज़िया ने एक न सुनी। रज़िया के जाल में एक बड़ी सी मछली आ फंसी। जाल खींचते हुए सहसा उसका पाँव फिसला और वह गहरे पानी में उतर गई। रहमान ने आगे बढ़कर रज़िया का हाथ थाम लिया। रज़िया को सब कुछ भूल गया। पानी से बाहिर निकाल कर रहमान ने रज़िया का हाथ छोड़ दिया। रज़िया को लगा जैसे वह हवा में उड़ रही थी कि सहसा धरती पर आ गिरी हो। बाहें फैलाए वह अपनी भावना में मग्न रहमान की ओर टिकटिकी लगाए देखती रही। रहमान ने नज़रें नीची कर लीं। रज़िया की आँखों में समुद्र तड़पने लगा। 'जंगली' उस के मुँह से निकला और पीठ फेर कर उस ने अपनी

ग्राँखों पर हाथ रख लिये। पलकों पर रुके ग्रांसुग्रों के कारण वह रहमान की ग्रांखों में छलकते पानी को न देख सकी। 'रहमान!' रज़िया की ग्रावाज़ शिकवे से बोझल थी।

"हूँ"

"तुम इतने कठोर क्यों हो?"

रज़िया, मैं मानता हूँ कि...मैं तुम से प्रेम करता हूँ लेकिन इस समय तुम से कहीं ज़्यादा बंगला देश को मेरी ज़रूरत है, जाने कब न रहूँ।" कुछ समय बीत गया, दोनों चुप खड़े रहे। ग्राखिर रज़िया के होंट खुले, "देश को हम सब की ज़रूरत है। रहमान क्या ऐसा नहीं हो सकता कि हम दोनों इक्ट्ठे ज़िन्दा रहें ग्रौर मरें तो भी एक होकर। तुम्हें पा कर मैं भी शक्तिशाली बन जांऊ गी। मैं भी बंगला देश के काम ग्रा सकूंगी..." रज़िया बोलते बोलते रुक गई। उस का मुंह सुर्ख होगया। "रज़िया!" रहमान के मुंह से निकला ग्रौर दोनों ग्रालिङ्गन में ऐसे बन्ध गए जैसे जन्म जन्म के साथी हों। रात ने चाँद के ग्राँचल में मुंह छिपा लिया।

सवेरा बस्ती वालों के लिये दो शुभ समाचार लेकर प्रगट हुग्रा। एक रज़िया ग्रौर रहमान की शादी का ग्रौर दूसरा यह कि मुक्तिबाहिनी विजय का डंका बजाती हुई केवल दो मील दूर रह गई है।

बस्ती दिन भर खुशी से झूमती रही। रज़िया के पांव धरती पर नहीं पड़ रहे थे। रहमान भी व्यस्त रहा। मन की मुराद उसे रज़िया और स्वतंत्रता के रूप में मिलने जा रही थी। वह झोंपड़ी से बाहिर निकला। "जॉय बॉङ्गला"...बस्ती वालों ने उसका स्वागत किया। वह मुस्कुराता हुआ आगे बढ़ा और उसने ऊंची जगह पर अपने देश का ध्वज लहरा दिया। 'जॉय बॉङ्गला', 'जॉय बॉङ्गला' के नारों से बस्ती गूंज उठी।

सुहाग रात की सुहानी कल्पना में खोया हुआ रहमान नदी की ओर चल दिया। बस्ती से थोड़ी ही दूरी पर यह नदी समुद्र में जा मिलती थी। रहमान ने नदी के निर्मल जल को देखा। उसे महसूस हुआ जैसे नदी की तरह वह भी हमेशा के लिये रज़िया के प्यार के सागर में मिल गया हो। सहसा रहमान की नज़र नदी पर पुल के नीचे कुछ छायाओं पर पड़ी। वह पुल की ओर बढ़ा। उसने देखा दो पाकिस्तानी पुल के नीचे टहल रहे थे। वह सम्भला, धरती पर लेट कर सिरकता हुआ पुल के पास पहुँच गया। अंधेरा हो चला था। सलाखों का सहारा लेकर छिपता छिपाता पुल पर चढ़ गया। पुल के बीचों बीच रखे हुए एक बम पर उस की नज़र पड़ी। उसने बम उठाया, फ्यूज़ निकाला। उसी

समय पाकिस्तानी फौजियों की नज़र उस पर पड़ गई। एक फौजी ने उस पर फ़ायर कर दिया। गोली रहमान का सीना चीरती हुई निकल गई। परन्तु रहमान में उस समय बला की हिम्मत आ गई थी। गिरने से पहले उसने निशाना लेकर बम पाकिस्तानियों की ओर फैंक दिया। बम फटा और दोनों पाकिस्तानियों के टुकड़े हवा में उड़ गये। नीम मुर्दा हालत में वह नीचे आ गिरा। धरती से माटी उठा कर मुशकिल से उसका हाथ माथे तक पहुँचा। उसने पुल की ओर देखा। मुस्कुराहट उसके होठों पर थिरकी और उसकी नजरें हमेशा के लिये बंद हो गईं। थोड़े समय के अंत मुक्तिवाहिनी पुल के ऊपर से गुज़र कर बस्ती की ओर बढ़ रही थी और रज़िया घर में सजी हुई चार पाई पर बैठ कर मैहंदी रगें हाथों से दीपक की लौ को सहारा दिये, रहमान की प्रतीक्षा कर रही थी।

●

जय भारत

उस पहाड़ी पर बने हुए किले के ऊपर डोगरों की वीरता के अमिट निशान आज भी अपना इतिहास सम्भाले हुए हैं। इतिहास जो गौरव के गीतों में जीवित है। इन गीतों में भारत का सम्मान है। धरती का प्यार है। देश के लिए मर मिटने वाले वीरों का ख़ून है। वह ख़ून, जिस से आज का इतिहास लिखा जा रहा है।

किले के साथ साथ बहती हुई नदी दिखाई देती है, जैसे कोई नाग देवता कुंडली मारे रक्षक बना बैठा है। एक ओर पक्की सड़क है, जो कभी कच्ची थी,

जिस के ऊपर कभी रण-वीरों के घोड़ों की टापों से उड़ने वाली धूलि किले के ऊंचे ऊंचे बुर्जों पर जा कर चमकती होगी। समय के साथ साथ किले के बुर्जों पर निशान भी पक्के हो गए। शत्रु सदा हमारे सुवर्णिय कलशों के लोभ में गरजता हुआ आया, परन्तु जीवित लौट कर न जा सका। इस धरती पर विदेशी झण्डे गाडने की उसकी लालसा सदा लालसा बन कर ही रह गई।

हिमालय आज भी छाती ताने खड़ा है, जिस की पीठ में से रिसने वाला लहू आग बन कर शत्रु को भस्म करने के लिए मचल रहा है। यह लहू जिससे धरती का दिया दिया जल उठेगा। वैसे ही, जैसे किले के पास पक्की सड़क के पार, उस पुरानी हवेली के एक सजे हुए ठाकुर द्वारे में रखी हुई चौकी पर जल रहा है। इस चौकी पर मूर्त्ति के स्थान पर अखबार का एक पन्ना रखे हुए सारा परिवार हाथ जोड़े खड़ा है। आश्चर्य है कि कहां ठाकुर और कहां कागज़ का एक पुर्जा। इस हवेली के वासी हैं, एक मां—ममता का रूप, एक बहू—कोमल फूल, पिता—पुराने किले की तरह अटल, एक पांच वर्ष का बालक—किले का छोटा सा बुर्ज। चिन्तन सिंह ने चौकी की ओर देखा और बोला, "आज भक्तसिंह आने वाला है।" जाने इस छोटी सी बात में क्या जादू था कि ममता,

फूल और छोटा बुर्ज, सभी चौंक उठे। सब की आंखों में खुशी नाचने लगी।

जम्मू व कश्मीर में भारतीय सेना पाकिस्तान के लिए लोहे की दीवार बन गई थी। भारत मां के इस अंग की सुरक्षा के लिए जिस प्रकार हमारे बहादुर लड़े थे, उस की कहानी इतिहास के पन्नों पर सुनहरी अक्षरों में लिखी जाएगी। चिन्तन सिंह सोच रहा था। उसका बड़ा बेटा लैफ्टिनैंट भक्तसिंह 'लिप्पा घाटी' के मोर्चे पर राणा सांगा की तरह लड़ा था और उसी बहादुर की तरह घायल हुआ था। महीना भर श्रीनगर के सैनिक हस्पताल में रह कर भक्तसिंह के अनगिनत घाव भरने लगे थे। बहादुरी के लिए भक्तसिंह को 'सेना मैडल' मिला था। कुछ दिन पहले श्रीनगर से लौटते समय चिन्तन सिंह ने बेटे को राज़ी कर लिया था कि वह अपना मैडल लेने के लिए दिल्ली जाते हुए एक दिन के लिए रास्ते में घर ठहरेगा।

चिन्तन सिंह ने गर्व के साथ अख़बार की ओर देखा, जिसमें बेटे को सेना मैडल मिलने का समाचार छपा था। वह उठा और ठाकुर द्वारे से बाहिर निकल कर बस स्टैंड की ओर चल पड़ा। विचारों में डूबे हुए उसने भक्तसिंह की मां की आवाज़ें भी नहीं सुनी थीं, जो चिल्ला चिल्ला कर कह रही थी...

"आज मेरे भक्तसिंह को लेकर आना, मेरे भगतू को लेकर आना, सुना आपने ? सुना ?"

चिन्तन सिंह आश्चर्य चकित था कि संसार को क्या हो गया है ! धरती के एक टुकड़े पर कोई किसी के रक्त का प्यासा है तो दूसरे टुकड़े पर कोई किसी के लिए अपने रक्त की अन्तिम बूंद तक बहाने को तैयार है। बंगला देश में क्या हुआ ! वहां किस ने क्या किया ! उस सोनार धरती को इन्दिरा गांधी की क्या देन है ! आज बंगला देश स्वतंत्र राष्ट्र बन गया है ! सहसा एक बस आ कर रुकी और चिन्तन सिंह की विचार धारा टूट गई। वह बस की ओर बढ़ा। भक्तसिंह इस बस में नहीं था। वह फिर विचारों में खो गया। चिन्तन सिंह का नाम उसके स्वभाव पर पूरा उतरता था। वह एक रिटायर्ड तहसीलदार था। उसका लम्बा चौड़ा कद-बुत था। माथे पर कुछ झुरियां अवश्य पड़ गई थीं, जिन में उम्र भर के अनुभव स्पष्ट थे या फिर सिर के बाल उस के गम्भीर चिन्तन के प्रतीक थे। चिन्तन सिंह ने बाल-बच्चों की रोटी कमा कर यदि कुछ बचाया था तो केवल अपना नाम। सारा प्रदेश उसे देवता समझता था। जो रुपया कमाया, उसे अपने पर कम और दूसरों पर अधिक खर्च किया। चिन्तन सिंह की वास्तविक

कमाई उस के दो बेटे थे। बड़ा भक्तसिंह और छोटा राम सिंह।

डाक्टर ने भक्तसिंह के घावों पर से सारी पट्टियां खोल दीं। वह मुस्कुराया और बोला, "तुम खुशकिस्मत हो।"

"जय भारत" भक्तसिंह के मुंह से निकला।

"तुम आज ज़रूर जाओगे?" डाक्टर ने भक्तसिंह से पूछा।

"हां डाक्टर। आज इक्कीस जनवरी है। छब्बीस जनवरी को मुझे अपना मैडल लेने के लिए दिल्ली पहुँचना है और उस से पहले मुझे दो दिन के लिए साम्बा में अपने घर रुकना है।"

"यह तो ठीक है, लेकिन तुम्हारी छाती का घाव अभी ठीक नहीं हुआ।" डाक्टर के लहजे में चिन्ता थी।

"मुझे कुछ नहीं होगा डाक्टर।" भक्तसिंह ने मुस्कुरा कर उत्तर दिया।

"गुड लक सोल्जर।" डाक्टर ने कहा और भक्तसिंह से हाथ मिलाया।

थोड़ी देर बाद भक्तसिंह सैनिक गाड़ी में सवार घर की ओर जा रहा था। वह दूर दूर तक फैले हुए खेतों में फसलों की ओर देख रहा था। फसलों का

यौवन किसी बात की याद दिला रहा था। यादों के रंग बिरंगे पर्दों में उसे कमला के कमल नयन दिखाई देने लगे, जिन में प्रतीक्षा थी।

कमला, जिस के साथ उसने कई बार गुड्डा गुड्डी का विवाह रचाया था और चार मास पूर्व जब सच मुच उस का विवाह कमला से हो गया तो खुशी से जैसे वह पागल हो उठा था। पागल तो कमला भी हुई होगी। लेकिन इस बात को जानने का उसे अवसर ही नहीं मिला था।

चिन्तनसिंह ने उसे तार दे कर बुला भेजा था। छुट्टी मिलना बहुत मुशकिल बात थी। क्यों कि उस की सेना कभी भी मोर्चे पर बुलाई जा सकती थी।

"मेरा घर जाना बहुत ज़रूरी है।" भक्तसिंह ने अपने कमांडिंग अफ़सर के सामने तार रखते हुए कहा। अधिकारी विचारों में डूब गया। भक्तसिंह उस का दायां हाथ था। एक नम्बर सैनिक। अधिकारी बोला, "ठीक है, तुम एक हफ्ते की छुट्टी जा सकते हो, लेकिन यदि सूचना मिले तो तुम्हें चौबीस घण्टों के अन्दर हाज़िर होना पड़ेगा।" भक्तसिंह ने स्वीकृति के लिए अपनी गर्दन हिला दी। एड़ियां मार कर सैल्यूट किया और चल पड़ा। घर पहुंचने पर भक्तसिंह को पता चला कि उस के विवाह का सारा प्रबन्ध हो चुका है। और फिर विवाह भी

उसका कमला से पक्का हुआ था। कब कमला की सगाई आई, कब विवाह पक्का हुआ, यह सब कुछ वह दूल्हा बना घोड़ी पर बैठा सोच रहा था।

एक ओर भक्तसिंह डोली लेकर घर पहुँचा और दूसरी ओर उसे अपनी ड्यूटी पर हाज़िर होने का तार मिल गया। उस के पास केवल एक रात थी, जो कमला का घूंघट उठाने में ही बीत गई थी। गाड़ी रुकी। भक्तसिंह चौंक पड़ा, गाड़ी से एक एक करके सिपाही उतरने लगे। रामबन में खाने के लिए उन्हें थोड़ी देर के लिए रुकना था।

गाड़ी रवाना होते समय भक्तसिंह की छाती में ज़ोर का दर्द उठा, परन्तु दर्द की परवाह किए बिना भक्तसिंह कमला की मीठी यादों में फिर खो गया था। जाने कब तक कमला की मोहिनी सूरत उस की आंखों के सामने घूमती रही। सहसा कमला की सूरत वातावरण में धुंधली होते २ आंखों से ओझल हो गई। सूरत ओझल नहीं हुई थी; बल्कि उसकी आंखें सदा सदा के लिए बंद हो गई थीं और उसकी गर्दन एक ओर को लुढ़क गई थी। गाड़ी रोक ली गई।

"ध्यानसिंह, भक्तसिंह कहां है...?" चिन्तनसिंह ने ध्यानसिंह को एक बस में से उतरते हुए देख कर

पूछा। ध्यान सिंह भक्तसिंह का साथी था। दोनों फौज में एक साथ भर्ती हुए थे। इकट्ठे लड़े और इकट्ठे ही घायल हुए थे। ध्यान सिंह से उत्तर न पा कर चिन्तनसिंह ने दुबारा पूछा। फिर भी उत्तर न मिला तो चिन्तनसिंह का माथा ठनका और उसने फिर पूछा, "भक्तसिंह ठीक तो है न ?" इस बार चिन्तन सिंह की आवाज़ में घबराहट थी।

ध्यानसिंह ने गर्दन ऊपर उठाई। एक बार चिन्तन सिंह की ओर देखा और हाथ में पकड़ा हुआ थैला उसे सौंपते हुए बोला, "श्रीनगर से लौटते समय बटोत के पास...भक्तसिंह ने अचानक दम तोड़ दिया। मैं अभागा हूँ, जो अकेला बच कर लौट आया हूँ।" ध्यानसिंह बोलता-बोलता रुक गया। उसने अपनी आंखों पर हाथ रख कर बस का सहारा लिया। उसे चक्कर आ गया था।

चिन्तनसिंह ने कांपते हुए हाथों से थैला पकड़ा। थोड़ी देर के बाद उसकी कपकपी बंद हो गई। उस ने नज़र उठा कर किले की ओर देखा। उसे लगा, जैसे बड़े बुर्ज के निशानों में एक निशान और जा मिला है।

चिन्तनसिंह घर पहुँचा। खिड़की के पीछे खड़ी कमला पर उस की नजर नहीं पड़ी। हाँ भक्तसिंह की मां के बोल उस के कान में पड़े, जो पूछ रही थी,

"कहां है मेरा भगतू ? मेरा भक्तसिंह कहां है ? बताओ, किधर है मेरा लाल ? मेरे जिगर का टुकड़ा भक्तसिंह ?"

"यह लो अपना भक्तसिंह ।" यह कहते हुए चिन्तनसिंह ने भक्तसिंह की मां के हाथों पर थैला रख दिया। भक्तसिंह की मां के हाथों से थैला ऐसे गिर पड़ा जैसे चिन्तनसिंह ने फूलों की जगह उस के हाथों पर दहकते हुए लाल अंगारे रख दिए थे ।

थैला उठा कर चिन्तनसिंह ने ठाकुर द्वारे में जा कर चौकी पर पड़े हुए अख़बार पर रख दिया। भक्तसिंह आज अपने घर आया था, परन्तु इस थैले के रूप में।

सहसा छोटा रामू थैला उठा कर चौकी पर बैठ गया। दुखों से निढाल मां के मुंह से चीख निकल गई। कमला ने मुंह फेर कर अपने कलेजे पर हाथ रख लिया। परन्तु चिन्तन सिंह की भर्राई हुई आंखों में चमक आ गई। उसे लगा, जैसे छोटे बुर्ज ने बड़े बुर्ज का स्थान ले लिया हो।

●

कलम और बन्दूक

अंधेरा, गुप अंधेरा, चांद सितारों की रोशनी भी मद्धम सी है। मन में अंधकार छाया हुआ है। टिमटिमाते दिये की लौ में अपने सामने रखे हुए सफेद कागज़ों की ओर देख रहा हूं। हाथ में कलम है, कागज़ पर कुछ लिख नहीं पा रहा। सोचता हूं शब्दों में असर ही कितना है! गीता भी लिखी गई, वेद उपनिषद्, रामायण, ग्रंथ, कुर्रान, अंजील के शब्द यदि मनुष्य के दिल की मैल को नहीं धो सके, अत्याचार, अन्याय के चंगुल से व्यक्ति को छुड़ा नहीं सके तो फिर मेरे शब्द आज धरती पर छाए हुए अंधकार को क्या दूर कर सकेंगे। नहीं, नहीं, मैं ग़लत

सोच रहा हूं। मैं एक भारतीय हूँ, मेरी कलम वक्त पड़ने पर बन्दूक भी बन सकती है। वक्त की पुकार को मेरे शब्द हर कान तक पहुँचा सकते हैं। उन कानों के पर्दे फाड़ सकते हैं, जो लालच और हवस में जान-बूझ कर बहरे बन गए हैं। मैं महासागर में एक कतरा हूं। मैं सोचूं कि मेरा योगदान कुछ नहीं, मेरे न होने से सागर सूख नहीं जाएगा, तो यह मेरी भूल होगी। हर कतरा ऐसा सोच सकता है और सागर सूख भी सकता है। मेरा योगदान अवश्य है और यदि है तो मेरा चरित्र क्या है? आज इस कठिन घड़ी में इस तूफ़ान में कितना दृढ़ हूं मैं? कितना महान् हूं? अपने सागर के लिए, अपने देश के लिये मैं क्या कर रहा हूँ?

दिन-रात, प्रातः सायं हर समय गोलियों की आवाज़, जहाजों की उड़ानें, टैंकों की गड़गड़ाहट सुनता हूं, जहां तक मेरे सुनने की शक्ति साथ देती है या देख सकता हूँ और फिर अखबारों में, रेडियो पर।

संसार में धरती के विभिन्न टुकड़ों पर अपनी किस्म के सांस हैं, अपनी अपनी किस्म की धड़कन है। कोई लालसा में किसी का हक़ छीनता है, कोई किसी को हक़ दिलाने के लिये जान की बाज़ी लगा देता है, कोई किसी को हक़ दिलाने वाले के हित की रक्षा करता है तो कोई अपने हित के लिये किसी को

आग में झोंक देता है। ऐसा क्यों है ? मानव अपना कर्तव्य क्यों नहीं पहचानता ? पश्चिमी पाकिस्तान को लीजिये। पश्चिमी पाकिस्तान भी तो धरती का एक टुकड़ा है। इस टुकड़े के हाकिमों को लीजिये, यहियाखां, जुल्फिकार अली भुट्टो ! ये क्या कर रहे हैं ? इन के इर्द-गिर्द फैली नज़रें ज़्यादा देख सकती हैं, चाहे देखने वालों के होठों पर मन की बात नहीं आ सकती। उनके ज़र्द चेहरों पर भय, सन्देह के बादल मंडला रहे हैं। पर ऐसा क्यों ? क्यों पाकिस्तान के टुकड़े हो गए ? क्यों मुजीबुर्रहमान के हाथों में, उन हाथों में जो यहिया और भुट्टो के मुंह तक निवाला ले जाते थे, आज हथकड़ियां हैं ? भुट्टो आज प्रधान कैसे बन गया है ? क्यों नूर-उल्-अमीन को उप-प्रधान बनाया गया ? बंगला देश में इतना ज़ुल्म क्यों हुआ ? क्यों ? क्यों ? मेरे सामने यह 'क्यों' एक बहुत बड़ा प्रश्न बन जाता है। मैं सोचता हूं, भावुक हो जाता हूँ, पलकों पर छलकते हुए आंसुओं को पी जाता हूँ। मुझ में शक्ति है। मैं पवित्र हवा में सांस ले रहा हूँ। धरती के उस टुकड़े का अंश हूं, जहां हिन्दू-मुसलमान एक ही शरीर के अंग हैं। जहां भगवान् हो या खुदा मगर एक है। धर्म एक है और वह है मनुष्यता, देश के प्रति ईसार और प्यार की भावना। जहां कृष्ण ने गोपियों के संग रास रचाई और युद्ध में सुदर्शन-

चक्र भी चलाया। जहां द्रौपदी की रक्षा के लिये भीम ने प्रण किया कि द्रौपदी के केश उस दुष्ट के रक्त से धोएगा, जिसने मनुष्यता को ललकारा था। जहां गंडीव-धारी अर्जुन जन्मा, वीर अभिमन्यु ने हंसते २ अपने सिर की कर्तव्य के यज्ञ में आहुति दे दी। जहां राम जैसा पुत्र, भैया, पति और शासक हुआ। राणा सांगा, महाराणा प्रताप, शिवाजी और रानी झांसी जैसे फूल स्वतंत्रता की वेदी पर चढ़ गये। जहां सीमा पर स्वतंत्रता को ललकारने वाले दुष्टों से अनगिनत भक्तसिंह आज लोहा ले रहे हैं। कितने महेन्द्र सिंह अपनी मातृ-भूमि की रक्षा के लिये लड़ रहे हैं। एक महेन्द्र सिंह के बलिदान की गाथा आपको सुनाता हूँ।

चीते की तरह लपक कर महेन्द्र सिंह शत्रु पर गोलियां बरसा रहा था। "पाकिस्तानी दरिन्दों को ऐसा सबक सिखाओ कि उम्र-भर याद रखें।" महेन्द्र सिंह के ये शब्द हवा में बिजली की तरह चमक रहे थे। उसने इने गिने साथियों की मदद से पाकिस्तानी कम्पनी के तीन हमले पस्पा कर दिये। जब शत्रु को मजबूर होकर अमृतसर की 'रानियां' चौकी से भाग कर जान बचानी पड़ी तो सरहद पार कर के, भागते हुए शत्रु का पीछा करते हुए अकेला महेन्द्र सिंह शेर की तरह दहाड़ रहा था, "ओए, भाग

गए ? आओ...आओ !" उसका कहकहा दूर तक गूंजता चला गया। सहसा बीस-पच्चीस शत्रुओं ने उसे घेर लिया। वह मुस्कुराया, "जय भारत" वह ललकारा और उसकी मशीनगन आग उगलने लगी। एक से दूसरी खंदक में छलांगें लगाता हुआ वह एक के बाद एक पाकिस्तानी का सफ़ाया करता रहा। सिर्फ पांच पाकिस्तानी बचे थे जब वे सब एक खंदक में उस पर कूद पड़े। महेन्द्रसिंह की मशीनगन बेवफ़ा निकली, गोलियां ख़त्म हो चुकी थीं। महेन्द्र सिंह ने मशीनगन के लोहे से दुश्मनों को मौत के घाट उतार दिया और दस गोलियां लगने के बाद बचे हुए दो पाकिस्तानियों में से एक के गले में हाथों से और दूसरे के गले में पांव का फंदा डालते हुए मौत की घाटी में खो गया। और एक बहादुर जिसने छम्ब सैक्टर के युद्ध में अकेले दुश्मन के पांच टैंक नष्ट कर दिये...यह है वह धरती, जहां हमारी नेता आज इन्दिरा है, जिस की आत्मा में भीम, अर्जुन, राम अभिमन्यु, राणा सांगा के सांस धड़क रहे हैं। जो कृष्ण की नीति रखती है और रानी झांसी सा साहस, जो महात्मा गान्धी और जवाहर लाल नेहरू की दूर-अन्देश शिक्षा की नींव पर परवान चढ़ी है।

मुझे पूरा विश्वास है भारत सरकार का गौरव बढ़े गा, चाहे सिक्योरिटी कौंसिल हो या सीमा।

निक्सन हो, चीन हो या पाकिस्तान के मूर्ख डिक्टेटर। निक्सन जिसकी नीति के कारण अमरीका का सिर दिन प्रति-दिन झुक रहा है। जो वियतनाम में हारे हुए जुआरी की तरह अपना देश चीन के आगे दाव पर लगा रहा है। जिसकी नीति की बिसात की रौनक आज नूर-उल्-अमीन और भुट्टो जैसे प्यादों की मुहताज है। भुट्टो जो अपना पांव धरती पर पटक कर कहता है पाकिस्तान हज़ार वर्ष तक लड़े गा। जबकि उसका दूसरा पांव हवाई जहाज़ की सीढ़ी पर रखा होता है और वह चीन या अमरीका भागने की सोच रहा होता ताकि अपने मित्रों के सामने गिड़गिड़ाये, "आगे बढ़ती और पाकिस्तानी फौजों का सिर कुचलती हुई भारतीय सेना को रोक लो!" रहा चीन जिस के लिये मैं इतना ही कहूंगा कि आज उसे अपने गरेबान में झाँकने की ज़्यादा ज़रूरत है। यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो घाटे में रहे गा...पर यह क्या! मेरी कलम तो इतनी तेज़ी से दौड़ रही है जैसे बन्दूक की गोली। ठीक ही तो है, कलम और बन्दूक में आज अंतर ही कितना रह गया है! मेरे सामने पड़े हुए पन्नों पर शब्द जग-मगा रहे हैं। मेरे मन में कोई अंधकार नहीं। आसमान पर सितारे भी मुस्कुरा रहे हैं। मैं इन्हें अच्छी तरह देख सकता हूं। यह भी रोशन हैं। अंधकार तो

केवल समझ का फेर है वरना सब कुछ रोशन है। भारत का गौरव रोशन है। बंगला देश का भविष्य रोशन है...आओ कलम तुम को चूम लूं। तुम मुझे कभी भटकने न दो गी। तुम मेरे लिये सब से बड़ा आभूषण हो जैसे बन्दूक भारतीय सिपाही के लिये सीमा पर।

●

जय बंगला

मेरी मां जब मरी, उस पर कफ़न डाला गया, अर्थी निकली, चिता में लकड़ियों पर रखा गया, सब मौन थे। तवी का पानी अपनी रवानी में था। कुछ समय बाद पिता जी के शब्द मेरे कानों में पड़े, "बेटा आग लगाओ चिता को" ! मेरे मस्तिष्क में एक धमाका सा हुआ। दिल सुलगने लगा। मां के शरीर को आग लगाऊँ ! यह विचार हथोड़ा बन कर मेरे मस्तिष्क पर चोटें लगाने लगा। मैं सम्भला, मेरे विचार भावुकता-पूर्ण थे, सच्चाई से कोसों दूर। मेरी मां के हृदय में अब धड़कन कहां थी ! चिता पर अब उसका मृत शरीर पड़ा था। दूसरे ही क्षण मैंने

चिता को आग के हवाले कर दिया। एक मृत शरीर को आग के सुपुर्द कर दिया। उस शरीर को, जिसने कभी मुझे जन्म दिया था—मेरे शरीर को, मेरे हाथों को। उन हाथों को जिन्हों ने अपनी जन्मदात्री को खाक के सुपुर्द कर दिया था। खाक के सुपुर्द ही तो होता है मृत शरीर, चाहे चिता हो या कब्र। मेरा एक प्रिय मित्र था न्याज़। उस की मृत्यु पर मैंने ही उसे दफ़न किया था। शरीर उतना ही रहता है। न बढ़ता है न कम होता है। उतना ही स्थान चाहिए उसे, चिता हो या कब्र। मूल्य पृथक् हो सकते हैं...मन्दिर हो या मस्जिद। शरीर, चिता या कब्र की वास्तविकता नहीं बदल सकती। कभी नहीं। जो इस वास्तविकता को पहचान गया, वह इन्सान बन गया वर्ना :—

'आदमी को भी मुयस्सर नहीं इन्सां होना !'

आदमी जहां इन्सान बन सकता है वहां शैतान भी। वह एक मृत शरीर को कांपते हाथों से आग के हवाले करता है तो हज़ारों जीवित शरीरों को बड़ी निर्दयता और क्रूरता से मृत्यु के मुंह में झोंक देता है और ऐसा हुआ, अभी कुछ दिन पहले, बंगला देश में एक कब्र से हज़ारों महिलाओं के ढांचे निकाले गए, जो कभी सुन्दर पवित्र शरीर होंगे। जो नग्न पशुता का शिकार हुए। अन्धेरों में कैद, फाकों से लाचार

मुर्दा हो हो गए। मुर्दा हुए तो उन्हें खाक के सुपुर्द करते समय क्या किसी के हाथ कांपे थे? इस की गवाही तो एक अथाह और लम्बी चौड़ी कब्र ही दे सकती है, जिस ने अपनी आंखों से यह देखा होगा। ऐसी ही और कितनी कब्रें हैं, जिन की वास्तविकता पल-पल अस्तित्व में आ रही है। इन कब्रों में डाक्टर, इंजीनियर, प्रोफेसर बुद्धिजीवी, साहित्यकार, कवि कलाकार गहरी नींद सो रहे हैं। शैतान का यह पशुतापूर्ण नाच शायद समाप्त न होता, यदि भारतीय सेना के जवान इस दहकती आग में न कूद पड़ते, अपनी जान हथेली पर रख कर याहिया और भुट्टो के यम-दूतों का गला न घोंट देते। भारत का बलिदान रंग लाया। इस बलिदान में कितनी ही वेदनापूर्ण कहानियां छिपी हुई हैं। कितने पत्थर हृदयों को पिघला देने वाले गीतों के वेदना-पूर्ण बोल हैं। एक बोल आप को सुनाता हूँ। मेरे पड़ोस में, एक घर में एक विधवा के तीन बेटे और तीन दामाद थे—सब सैनिक। जनवरी के दूसरे सप्ताह में उस विधवा को बारी-बारी छः तार मिले, जिन में उस के छः दिल के टुकड़ों की मृत्यु का समाचार था।

भारत और बंगला देश ने कन्धे से कन्धा मिला कर जनतंत्रीय मूल्यों की रक्षा के लिए जो कदम आगे बढ़ाया, वह कभी पीछे नहीं हटेगा।

पाकिस्तान ने बंगला धरती को मिटाने का प्रयत्न किया था। इस धरती के चमन को उजाड़ना चाहा था, लेकिन तानाशाह इस तथ्य से अपरिचित थे कि चमन में मसले हुए फूलों से भी वह राख बनती है और बनी जिस से एक नया चमन अस्तित्व में आया- 'बंगला देश।'

आज बंगला देश क्या है और पाकिस्तान क्या ?

आने वाले कल में बंगला देश क्या होगा और पाकिस्तान क्या होगा ?

यह समय ही बताएगा।

●

ख़ुदा झांक रहा था

रेहाना अपने कमरे की खिड़की में बैठी हुई सामने दूर दूर तक फैले हुए पानी की ओर देख रही थी। उस के मुँह पर घने लम्बे बाल इस प्रकार बिखरे हुए थे जैसे काले बादलों ने चांद को घेर लिया हो। पानी का समस्त नीला रंग उस की आंखों में आ बसा था और उन में थी एक गम्भीर वेदना। उस की कमल-पत्तियों जैसी आंखें सूज कर और भी बड़ी हो गई थीं, शायद रोने के कारण। कुछ ही घड़ियां बीती थीं, उस के अब्बा को ख़ाक के सपुर्द किए हुए। उस शरीर को, जिस ने कभी मामूली घाव

की पीड़ा सहन न की थी, वह व्यक्ति, जो मरते दम तक फूलों की भाँति कोमल रहा था।

रेहाना के अब्बा की मृत्यु एक रहस्य बन कर रह गई थी और उससे भी बड़ा रहस्य थी वह बात, जो उसने मरने से पहले की थी। रेहाना का रहमत से विवाह। रहमत, जिसे रेहाना ने इसी खिड़की में बैठ कर पहली बार देखा था। वह मछलियां पकड़ने के लिए उस ओर आ निकला था। रेहाना की नज़र रहमत पर पड़ी। उसका दिल धड़का; लेकिन दूसरे ही क्षण वह कांप उठी। रहमत एक अजनबी था। यदि अब्बा को पता चला तो वह मुझे इसी पानी में डुबो देगा...रेहाना ने सोचा था। दस बरस से अब्बा ने उसे देहलीज़ से बाहिर पांव नहीं रखने दिया था। बस यही कमरा उसका कदखाना था और सामने फैले हुए समुद्र के पानी को टिकटिकी लगाए देखते रहना उसका भाग्य बन गया था। फिर वह बड़े शौक से रहमत को मछलियां पकड़ते हुए कई बार देख चुकी थी। रहमत की नज़र भी उस पर पड़ी थी। दोनों ने एक दूसरे को पास से देखा था और रेहाना के हृदय में प्रेम की चिंगारी सुलग उठी थी। एकाएक रेहाना कांप उठी और साथ ही मीलों दिखता हुआ सागर, जैसे उसके विचार पत्थर बन कर पानी में गिरे थे। बुलबुले उठे और अपने

इर्द-गिर्द रेहाना की सुन्दर स्मृतियों के गोल गोल चक्र बना कर विलीन हो गए। चक्र बढ़ते बढ़ते सारे पानी पर छा गए। एक तूफ़ान सा आ गया और रहमत की नैया उसे भयानक तूफ़ान में घिरती दिखाई दी। वह पागल हो उठी और दौड़ कर नीचे उतरी। बरसों बाद वह घर से निकली थी कैद तोड़ कर। रहमत की नैया किनारे लग चुकी थी। वह नौका से निकल कर उस की ओर भागा और दोनों प्रेमी एक दूसरे के गले मिल गए।

जाने कब तक दोनों गले मिल कर रोते रहे। अचानक रहमत ने रेहाना को धीरे से अपने से पृथक् कर दिया। वह सहमा हुआ सामने देख रहा था। रेहाना ने मुड़ कर पीछे देखा। उस का अब्बा आ रहा था। रेहाना ने रहमत का हाथ पकड़ा और नौका की ओर बढ़ी। नौका तिनके की तरह तूफ़ानी लहरों में चक्र काटने लगी। रेहाना रहमत की बाहों में सिमट गई और फिर उसे कोई होश न रही। जब होश आई, उसने आंख खोली तो उसको अपना सिर अब्बा की गोद में दिखाई दिया। अब्बा की आँखों में आंसू थे। रेहाना को होश में आते देख कर आंसुओं में खुशी चमकने लगी। अब्बा ने उस के सिर पर कपड़ा रखा। रेहाना ने नज़र उठा कर देखा तो उस का दिल धड़कने लगा। सामने मौलवी

और रहमत बैठे थे। थोड़ी देर बाद उसका रहमत से विवाह हो रहा था। रेहाना को सोचने का अवसर ही न मिला था। वह हैरान सी कभी अब्बा की ओर और कभी रहमत की ओर देख रही थी। अब्बा प्यार से उसके सिर पर हाथ फेर रहा था, जिससे कभी उसे ममता न मिली थी, जिस ने कभी प्यार से नहीं बुलाया था। अब्बा की आंखों में जहां रेहाना ने केवल क्रोध देखा था, जिसने उसकी मां और उस पर अत्याचार ही ढाए थे। उन पर मुसीबतें ढाई थीं और सब से हैरानी की बात थी कि उसका रहमत से विवाह हो रहा था। रहमत, जो अब्बा की आसामी का लड़का था, एक निर्धन, परिश्रमी मछेरा। रेहाना को याद आया, वह किस प्रकार रहमत के साथ नौका में सवार हो कर ज़ालिम अब्बा से दूर भाग जाना चाहती थी और अब्बा के सामने यह एक महान् अपराध था, जिस का दण्ड था केवल मृत्यु। परन्तु उसे तो मिलने जा रहा था एक नया ज़ीवन। एक ऐसा जीवन, जिस पर स्वर्ग के देवता भी ईर्ष्या करें।

पानी में फैलने वाले चक्र मिटते मिटते मिट गए। रेहाना ने पानी से नज़र उठाई। वह अब रहमत की पत्नी थी। विवाह के थोड़ी देर बाद उस के अब्बा ने हवेली, ज़मीन, जायदाद, घर-बार, रुपया पैसा, नौकर चाकर, मान-मर्यादा—सब कुछ छोड़ कर

कब्रिस्तान की राह ली थी। कब्रिस्तान, जहां मनुष्य के पापों का हिसाब होता है और रेहाना के अब्बा ने तो असंख्य पाप किए थे। वह अठारह वर्ष पूर्व, लाहौर से व्यापार के सम्बन्ध में चिटागांग आया था और फिर वहीं बस गया था। लेकिन जिस धरती की कोख से उसने रोटी कमाई, उस धरती के निवासियों से जी भर कर घृणा की। केवल मृत्यु को निकट देख कर उस का हृदय पसीजा था।

एकाएक रेहाना का दिल कांपने लगा। उसे महसूस हुआ कि वह फिर से छोटी हो गई है। वह मां की छाती से चिपटी हुई है और फिर एक तूफ़ान, एक भयानक तूफ़ान! उसने आंखों पर हाथ रख लिए। लम्बे लम्बे सांस लेने शुरू कर दिए। थोड़ी देर बाद रेहाना ने आंख खोली। वह सामने देखने लगी और फिर सोच में डूब गई। पानी में दुबारा बुलबुले उठे और चक्र बनने लगे। जहां तक दृष्टि जाती, समुद्र फैला हुआ था। धरती की गोद में समाया चंचल सागर नौकाओं में सवार मछेरों से जैसे आंख मिचौली खेल रहा था। लेकिन रेहाना इन सब बातों से बे-खबर किनारे पर बनी हुई हवेली की पीड़ा में डूबे हुए अस्तित्व को सहारा दिए हुए खिड़की में बैठी नीले पानी की ओर देख रही थी। पानी में उठ रही लहरों की ओर, जिन्हों ने उस की

मां को सदा के लिए छीन लिया था। पानी के नीचे रहने वाले दरिन्दों का ग्रास बनी थी। उन दरिन्दों का, जो पानी से निकल कर कभी कभी धरती पर आ जाते हैं, निर्दोषों का खून पीने के लिए, माली बन कर कलियों को मसलने के लिए, मालिक बन कर दीन औरतों को जीते जी मार डालने के लिए, पिता बन कर सन्तान को जीवित कैदखानों में डाल देने को, ताकि वे छाती में गमों का धुंआं छिपाए केवल समुद्र में रींगते हुए दरिन्दों को देखती रहे, न नज़र उठा सके और न ही उससे देखा जा सके।

रेहाना का अब्बा रमज़ान, जो एक जागीरदार से कम न था, पच्चास वर्ष का होने पर भी अपने आपको नौजवान समझता था, जिसके सफेद बालों पर सदा खुशबूदार तेल चमकता रहता। छोटी छोटी आंखों में हवस और बे-ईमानी की चमक, मुँह पर चेचक के दाग, फूली गालों पर बनावटी सुर्खी, मोटे-मोटे होठों के बीच में निरन्तर पान चबाने से रंगे हुए दांत, जैसे किसी का खून चूस कर हटे हों। लम्बी नाक के नीचे बड़ी बड़ी मूछें, छोटा कद, गठा हुआ शरीर। रेहाना रमज़ान की बेटी नहीं लगती थी। वह मां पर गई थी। उतनी ही रूपवती, जितना कि पिता कुरूप।

रमज़ान की हवेली समुद्र से थोड़ी ही दूर एक टीले पर थी, जिसे नीचे से देख कर यूं लगता था कि अब गिरी कि अब गिरी। लेकिन हवेली जाने कब से यों ही आधी धरती पर और आधी हवा में तिरछी खड़ी समुद्र के पानी को घूर रही थी, जिस की लहरों पर उसे अब भी किसी मासूम के ख़ून के धब्बे तैरते हुए दिखाई दे रहे थे। हवेली ने अपनी आंखों से जाने क्या क्या देखा था। पानी के किनारे लोग बसते देखे थे। झोंपड़ियां बनते देखीं। मछेरों को जाल फेंकते देखा। मानवता की रुनझुन देखी। झोंपड़ियां कई बार तूफ़ान की नज़र हो गईं और कितने ही जीवन भी। रमज़ान को असामियों पर अत्याचार करते देखा। लोग पैदा होते देखे, मरते देखे। जनता में अत्याचारों के विरुद्ध रोष पनपते देखा। हवेली अब खुश थी। इस लिए कि धरती पर रक्त और मांस के बने हुए मनुष्यों पर रमज़ान के दबदबे के पांव धीरे धीरे लड़खड़ाने लगे थे। फिर हवेली ने रमज़ान की आदतें और बिगड़ती हुई देखीं। रात-दिन उसे नशे में धुत्त देखा। नाज़ुक अबलाओं की चीखें सुनीं। रमज़ान के कहकहे सुने। अपनी दीवारों पर गरीबों का पसीना बहते देखा। ख़ून की बूंदें गिरते देखीं। यह सब कुछ देखा और बर्दाश्त किया। लेकिन यदि बर्दाश्त न हो सका तो वह

नरक, जो रज़िया को शादी के बाद रमज़ान के घर प्राप्त हुआ।

रज़िया एक गरीब किसान जमाल की इकलौती बच्ची थी; जिसे देख कर चाँद भी शर्मा जाये। रज़िया और नज़ीर का प्रेम गांव भर में मशहूर था। नज़ीर की केवल मां थी। पढ़ लिख कर बजाय तहसीलदार या थानेदार बनने के उसने अपनी धरती पर अपने हाथों हल जोतना शुरू कर दिया। साईंसी औज़ारों और नए किस्म के खाद की सहायता से धरती की प्यास बुझाई। दो बरस के परिश्रम के बाद अपनी भूमि के छोटे से टुकड़े को स्वर्ग बना दिया। मां के सिर का बाल बाल ऋण में डूबा हुआ था। ऋण चुकाया, कुछ देर बाद गाय, भैंस, घोड़ा—सब कुछ उसके पास था। नज़ीर को रुपया कमाने का ही लालच होता तो वह भी शायद एक हवेली का मालिक होता, परन्तु उसके सिर पर तो भूत सवार था तमाम गांव को अपनी तरह पांव पर खड़ा करने का।

वह घर घर जा कर ज़माने की नई नई बातें समझाता। सैनिक शासकों के अत्याचारों से परिचित करवाता। झूठी स्वतन्त्रता की चक्की में पिस रही जनता सम्भलने लग पड़ी थी। उन का एक ही नेता था—शेख मुजीबुर्रहमान, जिस के इशारे पर सभी

जान देने को तैयार थे। पूर्वी पाकिस्तान की शासित जनता लक्ष्य की ओर अग्रसर होने को तैयार हो गई थी। ज्यों ज्यों लोगों में जागृति आती गई, त्यों-त्यों ही रमज़ान की राग रंग की महफिलें कम होने लगीं। हवेली में मासूम जवानियों की इज्जत लुटना बंद हो गई। उस की क्रोधाग्नि लावा बन कर नज़ीर पर बरसने को तैयार हो गया। वह खुर्राट व्यक्ति था। उस ने आखिर एक रास्ता निकाल ही लिया। ऐसा, जिस से सांप भी मर जाय और लाठी भी न टूटे।

नज़ीर इन दिनों ट्रैक्टर लेने बाहिर गया हुआ था। रमज़ान ने रज़िया के ऋणी पिता को कुर्की का भय दिखा कर और उसके लालची भाई को रुपये का लालच दे कर एक रात बलपूर्वक रज़िया को हवेली में ला कर उससे विवाह कर लिया। रज़िया आखिर महिला थी! दिल ही दिल जलती रही, सुलगती रही, मगर विवाह के बाद रमज़ान ही उस का सब कुछ था। नज़ीर वापिस आया तो अपना संसार लुटा देख कर वह पागल सा हो गया। लेकिन नज़ीर भी उस धरती का बेटा था, जिस में ईमान, इज़्ज़त, कुर्बानी कूट कूट कर भरी थी। नज़ीर ने आंसू पी लिए, जिसमें दिल व जिगर का ख़ून जल रहा था, ताकि प्यार बदनाम न हो। कुछ दिनों बाद नज़ीर सम्भला। उसके बाद नज़ीर ने सारा ध्यान

धरती सुधारने पर लगा दिया। धरती ही अब उस के लिए सब कुछ थी। नज़ीर की लगन देख कर रमज़ान को अपनी बाज़ी हारती दिखाई दी। उस ने नज़ीर को ख़त्म करने के लिए यह चाल चली थी, पर नज़ीर पर यह सदमा पड़ने से लोगों की भलाई और धरती की देख भाल का जुनून सवार हो गया था। रमज़ान ने अपना गुस्सा रज़िया पर उतारना शुरू कर दिया। रज़िया की दबी हुई चीखें हवेली ने सुनीं और गुस्से में चीखों की आवाज़ हवा के हवाले करदी। गांव वालों को पता चला। नज़ीर का अंग अंग गुस्से से कांपने लगा। रज़िया की खातिर उसने दिल पर पत्थर रख लिया था। उसको अत्याचारों की चक्की में पिसते देख कर बात उसकी बर्दाश्त से बाहिर हो गई।

बिजली चमक रही थी। बादल इस प्रकार गरज रहे थे, जैसे रज़िया के शरीर से ख़ून रिसता देख कर उन की छाती फटने लगी थी और उन्हों ने अपनी आंखों का सारा पानी आज ही बहाने का निर्णय कर लिया था। आंधी झक्खड़ बादल का जी खोल कर साथ दे रहे थे। समुद्र अपने अन्दर मचलती खड़ी लहरों को सम्हालने का प्रयत्न कर रहा था। नज़ीर तूफ़ानी लहरों में से तैरता हुआ दीवार फांद कर हवेली में चला आया। रात का अणु अणु

कांप उठा। उसने अपने आप को अन्धेरे की एक और चादर में लपेट लिया। किसी प्रकार नज़ीर रज़िया के पास जा पहुँचा। नज़ीर को देख कर रज़िया कांपने लगी। उसने नज़ीर को समझाने की बहुत कोशिश की, लेकिन नज़ीर गुस्से से पागल सा हो रहा था।

"तुम्हें अब इस राक्षस के पास पल भर के लिए भी नहीं रहने दूंगा। आज ख़ुदा भी धरती पर उतर आए, तब भी तुम इस हवेली में नहीं रह सकतीं।" नज़ीर ने मुश्किल से बात पूरी की और रज़िया का हाथ थाम लिया। लेकिन दूसरे ही क्षण उसके सिर पर जैसे एक पहाड़ सा गिर पड़ा और वह चकरा कर धरती पर ढेर हो गया। रज़िया के मुंह से चीख निकल गई। उसने नज़र उठा कर देखा, सामने, रमज़ान लाठी हाथ में लिए हांप रहा था। पास दो चार नौकर खड़े थे।

"इस को बांध कर ले आओ।" रमज़ान ने नज़ीर की ओर इशारा करते हुए नौकरों को आदेश दिया और रज़िया को बाज़ू से पकड़ कर घसीटता हुआ बाहिर निकल कर समुद्र की ओर चल पड़ा।

थोड़ी देर बाद गूंगी हवेली के सामने एक ऐसा अत्याचार हो रहा था, जिसे देखकर आकाश और धरती का कलेजा फटने लगा। देखते ही देखते

रमज़ान और उसके नौकरों ने रजिया और नज़ीर को एक छोटी सी नौका में डाल कर तूफ़ानी लहरों में धकेल दिया। हवेली के मुंह से यत्न करने पर भी आवाज़ नहीं निकल सकी। परन्तु रज़िया की चीखों से वातावरण गूंज उठा। कुछ ही क्षणों बाद हवा की सायं-सायं, बादलों की गरज, आंधी, तूफ़ान—सब कुछ बन्द हो गया।

एक मौन छा गया। शायद इस लिए कि आकाश पर बादलों की फटी हुई टाकी में से ख़ुदा झांक रहा था।

रेहाना ने घबरा कर पानी पर से नज़र उठा ली।

दोष

कलकत्ता की एक प्रदर्शिनी का हाल खचाखच भरा हुआ था। छोटे, बड़े, युवक, एक दूसरे को धक्के मार कर आगे निकलने का प्रयत्न कर रहे थे। सभी एड़ियां उठा उठा कर उस चित्र को देख रहे थे, जो हाल के मध्य एक स्टैंड पर रखा हुआ था। यह चित्र एक छोटे से बच्चे का था, जो कोने में बनी हुई कब्र की ओर रींग रहा था। बच्चा ऐसा लगता था, जैसे रो रहा हो। उस के चेहरे पर कुछ ऐसी ही रेखाएं खिची हुई थीं। केवल रोने की आवाज़ नहीं आ रही थी।

इस चित्र को अन्तर-राष्ट्रीय प्रदर्शिनी में प्रथम

पारितोषिक मिला था। यह चित्र पच्चीस-छब्बीस बरस के एक नवयुवक चित्रकार सलीम की रचना थी। तीखे नैन-नक्श वाला सुन्दर चित्रकार भी किसी कलाकार की रचना लगता था। देश विदेश के पत्रों के प्रतिनिधि उसका चित्र उतार रहे थे। चित्रकार को देख कर, हर एक को उसके लिए एक सम्मान सा पैदा होता था। हाल में शोर मचा हुआ था, परन्तु सब बातों से बेन्याज़, गम्भीर विचारों में डूबा हुआ चित्रकार चित्र की ओर टिकटिकी बांधे देख रहा था, जिस ने कला के संसार में हल-चल मचा दी थी। पत्र-प्रतिनिधियों ने उस से कई प्रश्न किए, लेकिन उस ने एक का भी उत्तर नहीं दिया। फीकी सी मुस्कुराहट उस के होठों पर थिरकती और वह नज़रें झुका लेता। एक बार जब उसे अपने बारे में बतलाने के लिए बहुत विवश किया गया तो वह केवल इतना कह कर मौन हो गया, "यह एक लम्बी कहानी है।"

समिति के प्रधान व दूसरे सदस्यों के भाषणों के बाद सलीम ने भी सीधे सरल शब्दों में समिति और कलाकार भाइयों का धन्यवाद किया, जिन्हों ने संसार के बड़े बड़े चित्रकारों की कलाकृतियों के होते हुए उसे इतना बड़ा मान दिया था। उसने बताया कि वह बंगला देश का रहने वाला है।

उसी रात वह गाड़ी में सवार हो कर अपने घर जा रहा था। लगता था, जैसे घर पहुँचने की उसे जल्दी थी। डिब्बे में एक बंगाली नवयुवक चित्रकार के पास आ कर बैठ गया, जिस ने थोड़ी ही देर में उस से परिचय निकाल लिया और शाम होते दोनों एक दूसरे से इस प्रकार घुल-मिल गए जैसे पुराने साथी हों।

"आप ने यह कला कहां से सीखी ?" नवयुवक ने बंगाली में पूछा।

"सकीना बेगम से।"

"एक महिला ने आप के हाथों की इस कला को जन्म दिया है ?" नवयुवक के लहजे में हैरानी थी। सलीम मुस्कुराया और बोला, "केवल मेरे हाथों की कला को ही नहीं, मुझे भी जन्म दिया है।"

"अर्थात्—?"

"जी हां, सकीना बेगम मेरी मां थी।"

"थी ?"

"हां, थी।" सलीम ने एक लम्बा सांस भरा। उस के चेहरे पर गहरे बादल छा गए। नवयुवक चुप हो गया। कुछ समय बीत गया। आखिर सलीम के होंठ हिले, "मेरे अब्बा का नाम इशत्याक़ ऐहमद था। मैंने उन्हें नहीं देखा। मेरी अम्मी सुनाती थीं कि वे चित्रकार थे। उन की रचनाओं में धड़कन

होती थी। सकीना चिटागांग के एक प्रसिद्ध वकील की इकलौती बेटी थी जिसे चित्रकला से बचपन से ही लगाव था। इशत्याक़ ने कोई शिष्य नहीं बनाया था, लेकिन सकीना का असीम शौक देख कर और वकील साहिब के ज़ोर देने पर उसे गुरु बनना पड़ा। सकीना पढ़ी लिखी समझदार लड़की थी, जिस ने धीरे धीरे इशत्याक़ को उसके व्यक्तित्व के बारे में परिचित करवाना शुरू कर दिया। चित्रकार अपनी कला की महत्ता से बिल्कुल अनभिज्ञ, उस महत्ता से, जिस की बदौलत उसे थोड़े ही समय में कला के संसार में स्थान प्राप्त हो गया। सकीना बहुत बड़े घराने की बेटी थी और कलाकार। उस के मन में धीरे धीरे सुन्दर चित्रकार के लिए प्यार अंगड़ाइयां लेने लगा और एक ऐसा समय आ गया, वह इशत्याक़ की पुजारिन बन गई। इशत्याक़ सकीना की कद्र करता था और फिर वह वकील साहिब के घराने के एहसानों तले दबा हुआ था। वह था भी भावुक कलाकार। इसलिए सकीना की आंखों में तैरते हुए प्यार के डोरों से प्रभावित हुए बिना न रह सका। कुछ समय बाद सकीना और इशत्याक़ का विवाह हो गया।

सकीना अपने चित्रकार पति को प्राणों से भी अधिक प्यार करती थी और इशत्याक़ जान से अधिक प्यार करता था अपनी कला से। इस का यह मतलब

नहीं कि उसे सकीना का ध्यान नहीं था, लेकिन सकीना को न जाने क्यों वहम सा होने लगा था कि इशत्याक़ उससे कहीं अधिक अपनी चित्रकला से प्यार करता है।

दो बरस बाद चित्रकार ने एक छोटा सा चित्र रच कर सकीना की गोद में डाल दिया और स्वयं जैसे उसे भूल सा गया। उस की चित्र-शाला में कितने ही चित्र पड़े रहते थे। वह किस-किस को याद रखता। नई रचना जब उस के मस्तिष्क में उभरने लगती तो उसकी उंगलियां मशीन की भांति चलने लगतीं और रचना कागज़ पर रूप लेना आरम्भ कर देती। उस समय इशत्याक़ अपनी कल्पना में सुध-बुध खो बैठता, परन्तु नई कृति साकार होकर सामने आती और इशत्याक़ उसे भूल जाता। वह अपने बेटे को भी उतना ही प्यार दे सका था, जैसे उस की चित्र शाला में एक नए चित्र की वृद्धि हो गई हो। सकीना से यह सहन नहीं हो सका। उसके मन में पनपने वाला विद्रोह ज्वाला बन कर दहक उठा। इशत्याक़ को एक नया जीवन देने वाली सकीना उस की कला की बैरन बन गई।

इन्हीं दिनों एक बहुत बड़ी चित्र-प्रदर्शिनी लगने वाली थी। देश-विदेश के सुप्रसिद्ध चित्रकार उसमें भाग ले रहे थे। इशत्याक़ ने महीना भर के परिश्रम

से एक छोटे से बच्चे का चित्र बनाया। चित्र क्या था, एक जीती जागती तस्वीर थी। ऐसा लगता था, जैसे बच्चा बोलने जा रहा हो। यह चित्र बनाने के बाद इशत्याक़ का हाथ रुक सा गया। यह चित्र उस की सर्वोत्तम रचना थी।

जिस दिन इशत्याक़ को प्रर्दशिनी में जाना था, वह बहुत प्रसन्न था। वह अपने स्टुडियो में चित्र लेने गया, लेकिन द्वार पर ही उसके पांव जम गए। अन्दर से किसी बच्चे के रोने की आवाज़ आ रही थी। वह अन्दर दाखिल हुआ और आंखें फाड़ फाड़ कर अपने चित्र की ओर देखने लगा, जिस पर हाथ-पैर मारते हुए एक बच्चा रो रहा था। इशत्याक़ को महसूस हुआ जैसे उस की रचना में जान पड़ गई हो, लेकिन दूसरे ही क्षण वह होश में आ गया। बच्चे के नीचे उसके चित्र के टुकड़े बिखरे पड़े थे। सारी बात उस की समझ में आ गई। उन्हीं पांवों वह वापिस लौटा और कमरे से बाहिर निकल गया—और फिर कभी दिखाई न दिया।"

सलीम ने छलकी आंखों को रूमाल से पोंछा। सामने बैठा हुआ बंगाली युवक बुत बना सलीम की ओर देख रहा था। "इशत्याक़ के चले जाने के बाद सकीना ने फटे हुए चित्र के टुकड़े जोड़े तो उसे

पहली बार इस बात का एहसास हुआ कि सामने कागज़ पर उस के ही बच्चे का चित्र था। इस बात का इशत्याक़ और सकीना दोनों को पता चला लेकिन सकीना को चित्र जोड़ते हुए और इशत्याक़ को चित्र रचते समय।" सलीम भर्राई हुई आवाज़ में बोल रहा था। "दोष दोंनों में से किसी का नहीं था। दोष था उस प्यार का, जो सकीना को इशत्याक़ से था और इशत्याक़ को अपनी कला से। सकीना ने इशत्याक़ के दिल में उस के ख़ून के लिए ममता पैदा करने का यत्न किया था और उसे वह सदा के लिए खो बैठी थी। इस के बाद सकीना के लिए दो ही बातें जीवन का केन्द्र बन कर रह गईं। इशत्याक़ की प्रतीक्षा और अपने बच्चे को चित्र-कला सिखाने की साध। इशत्याक़ का फटा हुआ चित्र ही उस ने बेटे की चित्र कला की मंज़िल बना लिया।"

थोड़ी देर की खामोशी के बाद सलीम ने दृष्टि उठा कर नवयुवक की ओर देखा और बोला, "अपने अब्बा के उस शाहकार में मैंने केवल एक कब्र की वृद्धि की है। यह कब्र मेरे हृदय का ही घाव नहीं, बल्कि धरती की छाती का एक बोझ है। यह था मेरा शाहकार, जिसे प्रथम पारितोषिक मिला है। मेरी मां की एक साध तो पूरी हो गई और दूसरी—" सलीम बोलते बोलते रुक गया। सहसा उसकी दृष्टि

युवक की कापी पर पड़ी जिस पर जल्दी जल्दी वह कुछ लिख रहा था। सलीम के पूछने पर बंगाली युवक ने बताया कि वह एक प्रेस-रिपोर्टर है। कुछ देर खामोशी रही।

"मैं एक अन्तिम प्रश्न आप से पूछना चाहता हूँ।" युवक ने सलीम से कहा।

"पूछिए।"

"चित्र में बच्चा जिस कब्र की ओर रींग रहा है वह किस की है?"

"मेरी मां की।"

"आप की मां—?

"बंगला देश के स्वतंत्रता संघर्ष के इतिहास के पन्नों को खोल कर पढ़िये। आप को ऐसी अन-गिनत कब्रें मिलेंगी।

●

दाग

मैं एक भारती हूँ। फौज में कप्तान था। पढ़ा लिखा हूँ। बहुत भोला भी नहीं। बिना सोचे समझे कोई फैसला कर लूँ ऐसा भी नहीं। मैं कलकत्ता कई बार आया था। कलकत्ता जिसे शहर की जगह एक मशीन कहा जाये तो ज़्यादा अच्छा होगा। जिसमें लाखों पुर्ज़े अपने आप काम करते रहते हैं बिना एक दूसरे से पहचान किये, और बिना समय नष्ट किये। मुझे कलकत्ता आए हुए चौथा दिन था। मैं बस में बैठ कर जम्मू की टिकट लेने के लिए स्टेशन की ओर जा रहा था और सोच रहा था भारत कितना महान् देश है जो अपनी खुशी दूसरों के साथ

बांटता है और दूसरों का दुःख भी बांट लेता है।

बंगला देश के स्वतंत्रता-संघर्ष और पाकिस्तानी फौजी डिक्टेटरों को नाकों चने चबाने में मेरा और मेरे कितने ही भाइयों का भी सहयोग है। जहां बंगला वासियों ने बलिदान दिए वहाँ भारती जवानों ने भी लड़ाई के अग्नि-कुंड में अपनी जानों की आहुतियां दीं। बंगला देश को नर-पशुओं से घिरा हुआ देख कर भी जब सारा संसार मौन साधे हुए था, उस समय भारत ने लाचारों की सहायता की सौगन्ध ली और नए बांगला देश के जन्म के लिए अपना रक्त बहाया। रक्त के ये बिन्दु इतिहास के स्वर्ण अक्षर बन कर अमर हो जाएंगे।

स्टेशन पास आ गया था। मैं बस में से नीचे उतरा।

दो दिन के बाद मैं प्रथम श्रेणी की 'सलीपिंग-बर्थ' पर लेटा हुआ था। सामने वाली 'बर्थ' अभी तक खाली थी। डिब्बे में एक शोर सा मचा हुआ था। कोई सामान रख रहा था कोई लेटने के लिथे बिस्तरा लगा रहा था और कोई थर्मस या सुराही में पानी भर रहा था। गाड़ी के चलने में दो चार मिनट ही बाकी रहे थे कि मेरे सामने वाली 'बर्थ' पर एक कुल्ली सामान रखने लगा। यह बर्थ एक अंग्रेज़ लड़की की थी।

थोड़ी देर के बाद मैंने थर्मस उठायी और पानी पीने से पहले मैंने उस लड़की से पानी पीने के लिए पूछा। उस ने मुस्कुरा कर हाथ आगे बढ़ाया। हम दोनों ने पानी पिया और अपने अपने विचारों में खो गये।

कुछ समय बीत गया। सहसा मेरी नज़र उठी मैंने देखा कि अंग्रेज़ लड़की कोई रसाला पढ़ रही थी। मैंने भी एक किताब निकाली और उस के पन्ने उलटने लगा। लेकिन मेरी सोच कहीं और थी। किताब एक तरफ रख कर मैं लेट गया। धीरे धीरे मेरी आंखें बन्द होने लगीं। गाड़ी की गड़गड़ाहट कम होती गई और मेरा मन दूर बहुत दूर एक पहाड़ी के नीचे जा पहुंचा। पहाड़ी पर चढ़ कर मैंने एक बहुत बड़ा दरवाज़ा पार किया, नौ फ़ुट की कब्र के पास से होता हुआ, एक रौनक वाले बाज़ार से गुजरता हुआ 'राजे की मण्डी' के पास एक हवेली में जा पहुंचा, जहां रेणू थी, रेणू का प्यार था। रेणू जिसने अपना हाथ मेरे हाथ में देने के लिये समाज से टक्कर ली थी। नहीं तो कहां रेणू और कहां मैं! रेणू एक बड़े घराने की इकलौती लड़की थी और मैं, जिसने हमेशा ग़रीबी के अन्धेरों में ठोकरें खाई थीं। रेणू को अपनाने की लालसा ही एक ऐसी शक्ति थी जिसके सहारे मैं पढ़ा-लिखा और फौज

में कप्तान बना। रेणू की तपस्या और मेरी मेहनत के आगे उसके माता-पिता को हार माननी पड़ी थी। रेणू के पिता की चिट्ठी आयी थी जिसे अफ़सरों को दिखा कर मुझे एक महीने की छुट्टी मिली थी। लड़ाई के बाद मैं पहली बार घर जा रहा था। कुछ दिनों के बाद मेरा और रेणू का विवाह होने वाला था। मासूम और पवित्र धड़कनों का एक अटूट बन्धन!

मेरी आंख खुल गई। मुझे कोई ज़ोर ज़ोर से हिला रहा था। मैंने करवट बदली। सामने वही अंग्रेज़ लड़की खड़ी ऊपर की ओर ईशारा कर रही थी। मैंने नज़र उठा कर देखा और फिर उठ कर यदि मैं एक ही छलांग में हाथ न डालता तो अटैची और ट्रंक मेरे सिर पर ही आ गिरे होते! मैं उन्हें सम्भाल कर फिर बैठ गया। मेरा मन धड़कने लगा। अटैची और ट्रंकों में मेरे विवाह का सामान था, मेरे और रेणू के विवाह का। मैंने रेणू के लिये चीज़ें खरीदने के लिये सारा कलकत्ता छान मारा था। चुन २ कर, एक से एक बढ़िया साढ़ी उसके लिये खरीदी थी और प्रतीक्षा अब एक लम्बी रात बनती जा रही थी।

"किन सोचों में डूबे हुए हैं आप?"

"जी कुछ नहीं—"

मैंने चौंक कर लड़की को अंग्रेज़ी में ही जवाब दिया और वह अपने मुंह पर हाथ रख कर हंसी रोकने का यत्न करने लगी। मैंने उसकी ओर देखा, मुझे वह मासूम सी लगी।

"क्या नाम है आपका ?"

"मार्था"

"मेरा नाम राम है।" मैंने उसके पूछने से पहले ही अपना नाम बतला दिया। हम दोनों मुस्कुरा दिये। यहीं हमारी पहचान शुरू हुई। रात को हम ने रोटी भी इकट्ठे ही खाई। मार्था में एक गुण था कि उसे अपनी मीठी बातों से दूसरों पर प्रभाव डालना आता था। रात देर तक हम एक दूसरे से बातें करते रहे। जब ज़रा मेरी झिजक ख़त्म हुई तो मैंने उससे वह बात पूछ ही ली जो कब से मेरे मन में थी। मार्था के गोरे माथे पर रेखाएं गहरी हो गईं। इन रेखाओं में जाने मार्था के जीवन की कितनी कथाएं छिपी हुई थीं। उसने नज़र उठा कर मेरी ओर देखा। मुझे अनुभव हुआ जैसे शान्त सागर में तूफ़ान आ गया हो ! मैं एक भावुक व्यक्ति हूं। मार्था की जीवन गाथा के टेढ़े रास्तों में खो सा गया।

मार्था अपनी कहानी सुना चुकी थी। कहानी थी भी कितनी ! इस कहानी की नींव एक बहुत बड़ी भूल पर खड़ी थी। यह नींव जब तक खड़ी रहनी

थीं, मार्था को तड़पना ही तड़पना था। न यह नींव टूटनी थी और न ही मार्था को सुख का सांस आना था। नींव टूटती भी कैसे जब मार्था को उस का विक्टर मिलना ही नहीं था। विक्टर जो मार्था को अपनी जान से भी अधिक प्यार करता था। विक्टर लड़ाई से वापिस आने वाला था। मार्था बहुत खुश थी। विक्टर की प्रतीक्षा में अपनी आंखें बिछाये हुए थी। विक्टर जब आया और मार्था ने उसे देखा तो उसके मुंह से एक चीख निकल गई। विक्टर का केवल नाक ही बचा था, बाकी सारा चेहरा अत्यन्त भय-प्रद बन चुका था। एक आंख, एक टांग और जाने कौन कौन सा अंग विक्टर के शरीर का साथ छोड़ चुका था। पता इस लिये नहीं चल सका कि विक्टर दो तीन दिन जितना समय मार्था के साथ रहा, यह जानने के लिये बहुत था कि मार्था की नज़रें बदल चुकी हैं। उसके बाद विक्टर कहीं ऐसा जा छिपा कि फिर कभी दिखाई नहीं दिया। बस आगे मार्था का जीवन एक दर्दनाक कहानी बन कर रह गया था।

सहसा मार्था ने मेरी ओर गुस्से से देखा। मैं अभी उस के इस परिवर्तन पर सोच ही रहा था कि वह बोली, "जो भी मेरी कहानी सुनता है वही अफसोस करता है परन्तु मुझे इस शब्द से इतनी

घृणा है कि...'' बाकी बात मार्था के होठों पर ही रुकी रह गई। वह बोलते बोलते क्यों चुप हो गई थी? यह सोचने का मुझे अवसर ही नहीं मिला था। मैं उछल कर सामने की बर्थ पर जा गिरा था। उसके बाद मुझे अपने ऊपर अटैची और ट्रंक गिरते दिखाई दिये और नीम बेहोशी की हालत में मुसाफिरों की चीखें सुनाई दीं।

गाड़ी उल्टने के कई सप्ताह बाद मुझे होश आई, शायद इस लिए कि मुझे पता चल जाये कि मैं अब राम नहीं रहा था, विक्टर बन चुका था।

चार महीने बीत चुके थे मुझे दर-बदर भटकते। रेणू का सामना करने का हौसला मुझे नहीं हुआ। मैं एक जगह ठहर नहीं सकता, इसलिये कि मेरा मन छलनी हो चुका था। मैं कोई काम कर नहीं सकता था। आधे शरीर से काम कर भी क्या पाता? आधे शरीर वाली बात शायद आप झूठ समझते यदि मुझे देख न लेते। मुझे याद है कि एक बार एक महात्मा ने कहा था, "राम तुम्हारे जैसे किस्मत वाले मनुष्य संसार में गिनती के होंगे, जिन को भगवान ने ऐसा सुन्दर शरीर दिया हो। तुम्हारे पास सब कुछ रहेगा—रुपया, मान, सब कुछ और यदि नहीं रहा तो वह होगा तुम्हारा स्वस्थ शरीर।" परन्तु अब इन बातों से क्या लाभ! अब आप मुझे

देख ही रहे हैं। मैं शब्दों की पोशाक में अपना अंग-हीन शरीर छिपा नहीं सकता। आप मुझे देखेंगे और ज़रूर देखेंगे।

हां, एक बात मैं आप को बतलाना भूल गया। एक ऐसी बात जो मेरे जीने का सहारा है। अपनी रेणू की बात, जिसकी नज़रों में मैं आज भी पहले जैसा राम हूं, जिसको आज भी पहले की तरह मेरी दो आंखें, दो बाहें, दो टांगें दिखाई देती हैं। वह देखती है तो मेरे चेहरे के गहरे लम्बे चौड़े दाग़ भी छिप जाते हैं। मैं पहले की तरह दौड़ता फिरता हूँ। अपने एक हाथ से रेणू के फूलों को शरमाने वाले शरीर को छूता हूं तो मुझे लगता है कि जैसे किसी पूर्ण आदमी ने अपनी प्रतिमा को छाती से लगा लिया हो। रेणू के होते हुए मैं आधा आदमी हो भी कैसे सकता हूँ! मेरा आधा शरीर तो रेणू है। रेणू यदि महान् न होती तो मेरी प्रतीक्षा क्यों करती? क्यों अपनी तरुण उमंगों के तेल से मेरी प्रतीक्षा का दीपक जलाये रखती? रेणू मार्था नहीं थी जिसने घर आए हुए प्रीतम को ठुकरा दिया था। रेणू रेणू है, सच्चे प्यार की मिसाल, जिसने चार महीनों के बाद जम्मू से सैकड़ों मील दूर लम्बी चौड़ी घाटियों में मुझे ढूंढ लिया था और मेरे घावों पर बारी बारी अपने प्यासे होंठ रख दिये थे।